www.thearyasamaj.org

ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

दिसम्बर २०१६ Date of Printing = 05-12-16
प्रकाशन दिनांक= 05-12-16
वर्ष ४५ : अङ्क २
दयानन्दाब्द : १९२
विक्रम-संवत् : मार्गशीर्ष-पौष, २०७३
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,११७

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व
सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सह सम्पादक : ओम प्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :
दयानन्दसन्देश (मासिक)
४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com
एक प्रति ५.०० रु० वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस अंक में

❑ देव दयानन्द बनो २
❑ वेदोपदेश ३
❑ वैदिक मन्त्रों के........ ४
❑ महान् व्यक्तित्व........ ७
❑ राष्ट्र की अस्मिता........ ९
❑ एक हजार वर्ष पूर्व.... ११
❑ लेडी टेरेसा.... १३
❑ महाप्रतिभा मंडित...... १७
❑ नेपाल का लाडला वीर १८
❑ महर्षि दयानन्द २०
❑ भारत की वैदिक काल...... २३
❑ हमारा प्राचीन नाम..... २७

सत्यार्थप्रकाश
प्रचार संस्करण – ३००० रुपये सैकड़ा

www.thearyasamaj.org

देव दयानन्द बनो

(पं. नन्दलाल निर्भय, भजनोपदेशक, आर्य सदन बहीन जनपद पलवल (हरियाणा)

जगतगुरु दयानन्द थे, ईश्वरभक्त महान।
देशभक्त धर्मात्मा, थे वैदिक विद्वान्।।
थे वैदिक विद्वान्, तपस्वी थे ऋषि त्यागी।
मानवता के पुत्र, निराले थे वैरागी।।
किया विश्वकल्याण, सन्त थे परोपकारी।
मान रही है देव, उन्हें अब दुनियां सारी।।

भूल गया है वेदपथ, फिर सारा संसार।
पाखडियों की हो गई, दुनियां में भरमार।।
दुनियां में भरमार, नित्य झगड़े होते हैं।
विधवा, दीन, अनाथ, रात-दिन अब रोते हैं।।
लाखों गऊएं सुनो! नित्य जाती हैं मारी।
मनमानी कर रहे, कुकर्मी अत्याचारी।।

देती है दीपावली, हमें साफ सन्देश।
जागो प्यारे आर्यो! काटो कष्ट क्लेश।।
काटो कष्ट क्लेश, वेद प्रचार करो तुम।
वीर साहसी बनो, जगत की पीर हरो तुम।।
करो धर्म के काम, उठो! कर्त्तव्य निभाओ।
ऋषिवर का है कज, आर्यो! उसे चुकाओ।।

सुख पाओगे आर्यो! दूर भगाओ फूट।
जहाँ फूट होती वहाँ, याद रखो, तुम लूट।।
याद रखो तुम लूट, प्रेम रसधार बहाओ।
देव दयानन्द बनो, विश्व को आर्य बनाओ।।
मानवता लो धार, बड़ा आदर पाओगे।
"नन्दलाल" कह अमर, जगत में हो जाओगे।।

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। – महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश– १. अग्नि (ईश्वर) - सर्वज्ञ, त्रिकालज्ञ, ज्ञानस्वरूप, सबसे महान, सुखवर्धक अग्निहोत्र आदि का उपदेश करने वालाा है।

२. अग्नि (भौतिक) अग्निहोत्र नामक यज्ञ को प्राप्त कराने वाला, प्रकाश गुण वाला, महान कार्यों का साधक, चलते समय मार्ग का दर्शक है।

परमेष्ठी प्रजापतिः ऋषिः। अग्निः = ईश्वरः भौतिकश्वा देवता।

निचृद् गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः।।

अथाग्निशब्देनोभावार्थावुपदिश्येते।।

अब अग्नि शब्द से ईश्वर और भौतिक अग्नि अर्थों का उपदेश किया जाता है।।

ओ३म् –वीतिहोत्रं त्वा कवे द्युमन्तꣳसमिधीमहि।

अग्ने बृहन्तमध्वरे।। यजु० 2।4॥

पदार्थः–(वीतिहोत्रम्) वीतयो विज्ञापिता होत्राख्या यज्ञ येनेश्वरेण। यद्वा वीतयः प्राप्तिहेतवो होत्राख्या यज्ञक्रिया भवन्ति यस्मात्तं परमेश्वरं भौतिकं वा। वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यसनखादनेषु। इत्यस्य रूपम् **(त्वा)** त्वां तं वा। अत्र पक्षे व्यत्ययः **(कवे)** सर्वज्ञ क्रान्तप्रज्ञ, कविं क्रान्तिदर्शनं भौतिकं वा **(द्युमन्तम्)** द्यौर्वहुप्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तम्। अत्र भूम्न्यर्थे मतुप्। **(सम)** सम्यगर्थे **(इधीमहि)** प्रकाशयेमहि। अत्र वहुलं छन्दसीति श्नमो लुक् **(अग्ने)** ज्ञानस्वरूपेश्वर प्राप्तिहेतुं भौतिकं वा **(बृहन्तम्)** सर्वेभ्यो महान्तं सुखवर्धकमीश्वरं बृहतां कार्य्याणां साधकं भौतिकं वा **(अध्वरे)** मित्रभावेऽहिंसनीये यज्ञे वा।। अयं मन्त्रः श० ब्रा० १/३/४/६//

सपदार्थान्वयः– हे कवे! सर्वज्ञ क्रान्तप्रज्ञ! अग्ने! (जगदीश्वर) ज्ञानस्वरूपेश्वर! (वयमध्वरे) मित्रभावे (बृहन्तं) सर्वेभ्यो महान्तं सुखवर्धकमीश्वरं (द्युमन्तं) **द्यौर्बहुप्रकाशो विद्यते** यस्मिँस्तं (वीतिहोत्रं) वीतयो विज्ञापिता होत्राऽऽख्या यज्ञा येनेश्वरेण तं परमेश्वरं (त्वा)= (त्वां समिधीमहि) सम्यक् प्रकाशयेमहि। इत्येकः।।

(वयमध्वरे) अहिंसनीये यज्ञो (वीतिहोत्रं) वीतयः प्राप्तिहेतवो होत्राख्या यज्ञक्रिया भवन्ति यस्मान्तं भोतिकं (द्युमन्तं) द्यौर्वहुप्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तं (बृहन्तं) बृहतां कार्य्याणां साधकं भौतिकं (कवे) (कविं) क्रान्तदर्शनं भौतिकं (त्वा) (तम्) (अग्ने) (भौतिकमग्निं) प्राप्तिहेतुं भौतिकं (समिधीमहि) सम्यक् प्रकाशयेमहि।। इति द्वितीयः।।

भाषार्थ :– हे (कवे!) सर्वज्ञ त्रिकालज्ञ! (अग्ने!) ज्ञानस्वरूप-परमेश्वर! हम (अध्वरे) मित्रता से रहने के लिए (बृहन्तम्) सबसे महान् तथा सुखों के बढ़ाने वाले (द्युमन्तम्) अत्यन्त प्रकाश वाले (वीतिहोत्रम्) अग्निहोत्र आदि यज्ञों के बतलाने वाले (त्वा) आप परमेश्वर को (समिधीमहि) हृदय में प्रदीप्त करें।। यह इस मन्त्र का प्रथम अर्ध है।

हम लोग (अध्वरे) हिंसा से रहित यज्ञ में (वीतिहोत्रम्) सुख प्राप्ति की हेतु अग्निहोत्र आदि यज्ञ क्रियाएँ जिससे सिद्ध होती हैं, उस भौतिक अग्नि को (द्युमन्तम्) वहुत कार्यों के साधक (कवे) क्रान्तदर्शी कवि रूप भौतिक (त्वा) उस (अग्ने) प्राप्ति के हेतु अग्नि को (समिधीमहि) अच्छे प्रकार प्रकाशित करें।। यह इस मन्त्र का द्वितीय अर्थ हुआ।

(हे.... अग्ने = जगदीश्वर! वयं (त्वा)= त्वां समिधीमहि)

भावार्थः– अत्र श्लेषालङ्कारः। यावन्ति क्रियासाधनानि क्रियया साध्यानि च वस्तूनि सन्ति, तानि सर्वाणीश्वरेणैव रचयित्वा ध्रियन्ते। मनुष्यैस्तेषां सकाशाद् गुणज्ञान क्रियाभ्यां बहव उपकाराः संग्राह्याः।।

भावार्थ :– इस मन्त्र में श्लेष अलङ्कार है। जितने भी क्रिया के साधन तथा क्रिया से साध्य पदार्थ हैं, उन सबको ईश्वर ने ही रच कर धारण किया है। मनुष्य उनसे गुणगान और क्रिया के द्वारा बहुत से उपकारों को ग्रहण करें।

www.thearyasamaj.org

वैदिक मन्त्रों के अर्थीकरण में ऋषि आदि का महत्व

(उत्तरा नेरूर्कर, बंगलौर, मो०- ०९८४५०५८३१०)

गत वर्ष के अक्टूबर, नवम्बर और दिसम्बर मासों में मैंने वेदमन्त्रों के ऋषि, देवता, छन्द, और स्वर की महत्ता की ओर ध्यान आकर्षित किया था। इस विषय में मुझे कुछ और सामग्री मिली है। इसको मैं यहाँ प्रस्तुत कर रही हूँ। यदि आपने मेरे पुराने लेख संग्रहीत किए हैं, तो उनके पुनरवालोकन से लाभ होगा। चाहें तो "दयानन्द सन्देश" के अन्तरजाल पर स्थित अंकों से पढ़ लें। तथापि मैंने इस लेख को अपने में पूर्ण रखने का प्रयास किया है।

ऋषि का महत्व

ऋषि मन्त्र का द्रष्टा कोई मनुष्य-विशेष नहीं होता, अपितु मन्त्र का द्वितीय विषय होता है, इसके मैंने कुछ प्रमाण पूर्व में दिए थे। उसके बाद मुझे इसका अकाट्य प्रमाण भी मिल गया। वह इस प्रकार है। वेदों में कुछ विषय आख्यायिका या संवाद के रूप में दिए गए हैं। इनमें से चार अतिप्रसिद्ध हैं- अगस्त्य-लोपामुद्रा संवाद (ऋक्० १/१७९), पुरूरवा-उर्वशी संवाद (ऋक्० १०/९५), सरमा-पणि संवाद (ऋक्० १०/१०८) और यम-यमी संवाद (ऋक्० १०/१०)। इनमें से सरमा-पणि संवाद की चर्चा मैंने नवम्बर, २०१५, के अंक में की थी। इसलिए इसको ही पहले लेते हैं।

१) सरमा-पणि संवाद

यहाँ (ऋक्० १०/१०८) मैंने दर्शाया था कि सरमा के इन्द्र की दूती होने का और पणियों के धूर्त होने की चर्चा तो मन्त्रों में मिलती है, परन्तु सरमा के कुतिया होने का कोई विवरण नहीं मिलता। सो, यह तथ्य मन्त्रों के ऋषि/देवता- सरमा देवशुनी- से प्राप्त हुआ है।

यहाँ मैंने एक अन्य बहुत ही आश्चर्यजनक सम्बन्ध पाया। सूक्त के ११ मन्त्रों के दो अलग-अलग ऋषि हैं- मन्त्र संख्या १,३,५,७,९ का ऋषि 'पणयः असुराः' है; शेष मन्त्रों २,४,६,८,१०,११ का ऋषि 'सरमा देवशुनी' है। इन मन्त्रों के देवता उल्टे हैं अर्थात् जहाँ ऋषि 'पणयः असुराः; हैं, वहाँ देवता 'सरमा देवशुनी' है और उसका विपरीत भी। अब जिस मन्त्र का जो ऋषि है, वह मन्त्र उसका वचन है, जैसे- पहले मन्त्र का ऋषि 'पणयः असुराः' है, तो उसे आख्यायिका में पणियों ने बोला है। फिर दूसरे मन्त्र का ऋषि 'सरमा देवशुनी' है, तो उसे सरमा ने बोला है। देवता इसके उल्टे हैं और उद्दिष्ट की वाचक है। पहले मन्त्र की देवता 'सरमा' है, सो वह उद्दिष्ट है। दूसरे मन्त्र की देवता 'पणयः' है, तो वे उद्दिष्ट हैं। यहाँ तक कि जिन मन्त्रों में उद्दिष्ट का सम्बोधन स्पष्ट-रूप से नहीं है और वचन कोई भी बोल सकता है, तब ऋषि/देवता से ही उद्देष्टा और उद्दिष्ट का बोध होता है।

यह कोई मन-गढ़न्त बात नहीं है, अपितु वेद की शैली है, यह पुरुरवा-उर्वशी के संवाद से भी प्रमाणित होता है।

२) पुरूरवा-उर्वशी संवाद

अठारह मन्त्रों वाले ऋक्० १०/९५ सूक्त के ऋषि इस प्रकार हैं- मन्त्र संख्या १,३,६,८,९,१०,१२,१४,१७ का पुरूरवा ऐळः; २,४,५,७,११,१३,१५,१६,१८ का उर्वशी। यदि मन्त्रों को पढ़ा जाए, तो ठीक इन्हीं मन्त्रों में ये ही उद्देष्टा हैं। अब यदि देवताओं को देखें, तो वे इस प्रकार हैं- १,३,६,८,९,१०,१२,१४,१७ की उर्वशी और २,४,५,७,११,१३,१५,१६,१८ की पुरूरवा ऐळः- अर्थात् पुनः ऋषि और देवता उलट गए और देवता सम्बोधित व्यक्ति को इंगित कर रही है।

www.thearyasamaj.org

३) यम-यमी संवाद

चौदह मन्त्रों वाले इस ऋक्० १०/१० सूक्त में पुनः बिल्कुल वैसी ही स्थिति पाते हैं। मन्त्र सं० १,३,५,६,७,११,१३ का ऋषि 'यमी वैवस्वती' है और देवता 'यमो वैवस्वतः'। ये वे मन्त्र हैं, जिनमें यमी यम को सम्बोधित करती है। शेष मन्त्रों का ऋषि 'यमो वैवस्वतः' है और देवता 'यमी वैवस्वती'। ये यम के द्वारा बोले गए मन्त्र हैं।

४) अगस्त्य-लोपामुद्रा संवाद

जबकि ऋक्० १/१७६ का यह सूक्त भी संवाद है, तथापि हम यहाँ एक भेद पाते हैं- यहाँ के सभी ६ मन्त्रों का ऋषि 'लोपामुद्रागस्त्यौ' है, और देवता 'दम्पती'। यहां मन्त्रों में हम पाते हैं कि कुछ मन्त्रों में स्पष्टता है कि कौन किससे बोल रहा है, परन्तु अन्य मन्त्र पति-पत्नी के लिए उपदेश रूप में ही हैं, और यह बताना कठिन है कि इसे लोपामुद्रा बोल रही है या अगस्त्य, जैसे दूसरा और तीसरा मन्त्र। सम्भव है कि इस कारण से उपर्युक्त पद्धति न निर्वाहित हो, या फिर यह इतना छोटा सूक्त है कि यहाँ यह बताने की आवश्यकता न हुई। इन मन्त्रों की सूक्ष्म समीक्षा करें तो पहला मन्त्र स्पष्टतः लोपामुद्रा की ओर से है क्योंकि उसमें स्त्रीलिंग में 'जरयन्तीः' पद का प्रयोग है। दूसरे और तीसरे मन्त्र, स्पष्ट न होते हुए भी, क्रमशः अगस्त्य और लोपामुद्रा की ओर से माने जाते हैं। दूसरे मन्त्र में कोई भी संकेत नहीं मिलता कि कौन इस वचन को कह रहा है। तीसरे मन्त्र में 'अभ्यजाव' पद आता है, जिसका अर्थ है- सब ओर से हम दोनों प्राप्त होवें। इसलिए यह वस्तुतः कोई भी कह सकता है या दोनों एक साथ भी कह सकते हैं। चौथे में 'लोपामुद्रा' पद पठित है। सो, वह अगस्त्य का वचन हुआ। तथापि 'लोपामुद्रा' पद सम्बोधना विभक्ति में नहीं है, अपितु प्रथमा में है। पंचम में पुनः स्पष्ट नहीं है- 'चकृम' पद से 'हम करें' यह अर्थ बनता है, इसलिए इसे कोई भी या दोनों बोल सकते हैं। परन्तु उसको अगस्त्य का बचन माना गया है। षष्ठ में 'अगस्त्यः' पठित होने से वह लोपामुद्रा का ही वचन है। पुनः 'अगस्त्यः' पद सम्बोधना विभक्ति में नहीं, अपितु प्रथमा में है।

जबकि इस सूक्त में उपर्युक्त रीति का निर्वहन नहीं हुआ है, तथापि इसका ऋषि 'लोपामुद्रागस्त्यौ' तो वक्ताओं का परिचय दे रहा है, किसी ऋषि-ऋषिका दम्पती का नहीं। यदि यह परिचय न हो, तो हम लोपामुद्रा और अगस्त्य को विशेषण के रूप में पढ़कर, सम्बोधन रूप में न लें, क्योंकि जैसे हमने ऊपर देखा, ये पद प्रथमा विभक्ति में प्राप्त होते हैं, सम्बोधना में नहीं। इसलिए ऋषि का यहाँ पर पुनः मन्त्रार्थ में महत्व है।

यदि पाठकगण किन्हीं और संवाद सूक्तों को जानते हों, तो मुझे uttaranerukar@gmail.com पर लिख भेजें। मैं उनको भी परखने का प्रयास करूँगी।

इसी विषय से सम्बद्ध- छन्दों की मन्त्रार्थ में भूमिका पर भी मुझे कुछ वेद-मन्त्र मिले। ये मुझे पूर्णतः समझ में तो नहीं आए, परन्तु पाठकों के विवेचन के लिए मैं उनको यहाँ प्रस्तुत कर रही हूँ।

ऋग्वेद १०/१३० में तीन मन्त्र आते हैं जो कि छन्द देवता के सम्बन्ध को इंगित करते हैं। यहाँ प्रजापति के यज्ञ का वर्णन है क्योंकि इस सूक्त का ऋषि है 'प्राजापत्यो यज्ञः'। देवता 'भाववृत्तम्' का अर्थ स्पष्ट नहीं है। इस यज्ञ का अर्थ ब्रह्माण्ड और मनुष्य शरीर की सृष्टि किया गया है। यहाँ तीसरा मन्त्र पूछता है-

कासीत् प्रमा प्रतिमा किं निदानमाज्यं किमासीत् परिधिः क आसीत्।

छन्दः किमासीत् प्रउगं किमुक्थं यद्देवा देवमयजन्त विश्वे।। ऋ० १०/१३०/३।।

अर्थात् जिस देव को सारे प्राकृतिक देव (शक्तियाँ) यजती हैं, उसकी प्रमा, प्रतिमा, निदान, परिधिः, छन्द, प्रउग उक्थ क्या हैं?

उत्तर मिलता है-

www.thearyasamaj.org

अग्रेर्गायत्र्यभवत् सयुग्वोष्णिहया सविता सं बभूव।
अनुष्टुभा सोम उक्थैर्महस्वान् बृहस्पतेर्बृहती वाचमावत्।।

ऋ० १०/१३०/३।।

अर्थात् अग्नि देवता के साथ गायत्री जुड़ा, सविता के साथ उष्णिक्, अनुष्टुप् और उक्थों के साथ महान् गुणों वाला सोम देवता संगत हुई और बृहस्पति देवता को बृहती वाणी (छन्द) प्राप्त हुई। स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक विद्यामार्तण्ड अपने भाष्य में इसका तात्पर्य यह बताते हैं, "इस प्रकार अग्नि, सविता, सोम, बृहस्पति देवता के गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती छन्द होते हैं।"

आगे कहा गया-

विराणिमित्रावरुणयोरभिश्रीरिन्द्रस्य त्रिष्टुबिह भागो अह्नः।
विश्वान् देवाञ्जगत्या विवेश तेन चाक्लृप्र ऋषयो मनुष्याः।।

ऋ० १०/१३०/५।।

मित्रावरुण देवता का विराट् छन्द है। इन्द्र का अभिश्री छन्द है। दिन के इस भाग का छन्द त्रिष्टुप् है। सारे देवों अथवा विश्वेदेव नामक देवता जगती से आविष्ट हैं। और उससे (इन छन्दों से) ऋषि और मनुष्य (वेदार्थ करने को) समर्थ होते हैं।

इससे प्रतीत होता है कि दिए हुए छन्द उन-उन देवताओं से सम्बद्ध है। इस तथ्य में कुछ संशय उत्पन्न होते हैं-

१) यदि मन्त्र देखे जाएं तो छन्द और देवता में यह सम्बन्ध सर्वत्र नहीं पाया जाता- गायत्री छन्द वाले मन्त्र का देवता अग्नि ही हो, ऐसा आवश्यक नहीं है।

२) विराट् नामक कोई छन्द नहीं है, यह शब्द सभी छन्दों का विशेषण है। इसलिए यहाँ किस छन्द का ग्रहण करना है, यह स्पष्ट नहीं है।

३) अभिश्री नामक कोई छन्द मुझे प्राप्त नहीं हुआ। अतः यहाँ किस छन्द का ग्रहण करना है, यह भी सन्देहास्पद है।

४) त्रिष्टुप् को 'दिन के इस भाग' से जोड़ा गया है। क्या यह ब्राह्म अहोरात्र के दिन (सृष्टिकाल) से जोड़ा जा रहा है? यदि हां, तो इसका अर्थ क्या हुआ, क्योंकि अधिकतर वैदिक मन्त्र इस सृष्टि से ही तो सम्बद्ध हैं?

इस प्रकार इन मन्त्रों में उत्तर कम और प्रश्न अधिक मिलते हैं। तथापि ये कुछ बहुत गूढ़ार्थ कह रहे हैं, यह स्पष्ट है। क्या यह सम्भव है कि किसी भी मन्त्र में दिए देवता के साथ-साथ छन्द से सम्बद्ध इन देवताओं का भी ग्रहण किया जाना चाहिए? मैंने कुछ मन्त्रों को इस प्रकार रखा, परन्तु मुझे इन देवताओं से सम्बद्ध कोई अर्थ समझ में नहीं आए। अथवा क्या यह सृष्ट्युत्पत्ति से सम्बद्ध कुछ तथ्य बताये गए हैं, क्योंकि यह प्रकरण उसी का है? तब भी छन्द और देवता में परस्पर सम्बन्ध तो मानना ही पड़ेगा। क्या ये अग्निहोत्र के मन्त्रों के बारे में कुछ बता रहे हैं? जो भी यहाँ रहस्य हो, यह स्पष्ट बताया गया है कि वेदार्थ को ठीक-ठीक जानने के लिए देवता और छन्द का सम्बन्ध जानना अनिवार्य है। सम्भवतः यह विद्या पूर्णतया लुप्त हो गई है।

प्रथम प्रकरण से प्रमाणित हो जाता है कि वैदिक मन्त्रों के ऋषि मन्त्रद्रष्टा नहीं हैं, अपितु उस मन्त्र का विषय निर्धारित करते हैं। उनको मनमानी रूप से बदला नहीं जा सकता। और उनसे मन्त्रार्थ में सहायता लेनी चाहिए। दूसरे प्रकरण में वैदिक मन्त्रों द्वारा देवता और छन्द के किसी गूढ़ सम्बन्ध को दर्शाया गया। छन्द और स्वर के बीच का सम्बन्ध हम पूर्व देख ही चुके हैं; यह एक नया सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध वास्तव में क्या है? इससे मन्त्रार्थ पर क्या प्रभाव पड़ता है?- ये विषय अन्वेषणीय हैं।

❑❑

www.thearyasamaj.org

महान् व्यक्तित्व के धनी स्वामी श्रद्धानन्द जी

(धर्मपाल आर्य)

भारत भूमि "बहुरत्ना वसुन्धरा" है। समय-समय पर दानवीर, शूरवीर, युद्धवीर, कर्मवीर और धर्मवीर भारत माँ की कोख से पैदा होते रहे हैं, जिन्होंने भारत माँ की एकता और अखण्डता को सुदृढ़ करने में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। ऐसे वीर सपूतों से भारत का इतिहास भरा पड़ा है। उन्हीं वीरों में एक महान वीर थे- स्वामी श्रद्धानन्द, जिनका बलिदान २३ दिसम्बर सन् १९२६ को एक मुस्लिम मतान्ध अब्दुल रशीद की गोली से हो गया था। उनके अमर बलिदान दिवस पर उनको याद कर, उनके प्रेरणा से ओत-प्रोत जीवन की अपने पाठकों के सामने चर्चा कर उस निर्भीकता की साक्षान्मूर्ति स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रति अपनी विनम्र श्रद्धाञ्जलि व्यक्त करने के साथ-साथ उनके प्रति अपनी कृतज्ञता भी ज्ञापित करना चाहता हूँ। स्वामी श्रद्धानन्द जी एक सफल प्रचारक, वक्ता, शास्त्रार्थ महारथी, आचार्य, गृहस्थी, क्रान्तिकारी, सुधारक, लेखक, प्रबन्धक और सफल पिता थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा ने आपको वस्तुतः मुन्शीराम से श्रद्धानन्द बना दिया। जिस प्रकार आप अपने पिता के आदेश का श्रद्धा से पालन करते रहे। जिस प्रकार महर्षि जी से श्रद्धापूर्वक भेंट कर श्रद्धापूर्वक ईश्वर के विषय मन्तव्य को आपने न केवल श्रद्धापूर्वक सुना, अपितु उस पर श्रद्धा से मनन करते हुए श्रद्धा से उसके अनुरुप अपने जीवन को बनाया तो इससे यह कहना असङ्गत नहीं होगा कि आपका नाम आपके व्यक्तित्व को संज्ञावाचक के रूप में कम तथा गुण व विशेपण वाचक के रूप में अधिक प्रस्तुत करता है। हमारे चरितनायक का जन्म पञ्जाब प्रान्त के जालन्धर जनपद के अन्तर्गत तलवन नामक ग्राम में फाल्गुन मास कृष्ण पक्ष त्रयोदशी सन् १८५६ में हुआ। कुल पुरोहित ने आपका नाम बृहस्पति रखा, जबकि घर पर प्रचलित नाम मुन्शीराम के नाम से पुकारा जाता था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा काशी की हिन्दी पाठशाला में हुई। इसी मध्य हिन्दी अंग्रेजी तथा उर्दू में आपका विशेष अभ्यास हो गया। तत्पश्चात् रेवाड़ी के जयनारायण कॉलेज, चार वर्ष वाराणसी तथा सैन्ट्रल कॉलेज इलाहाबाद में एम०ए० की पढ़ाई प्रारम्भ की लेकिन अस्वस्थता के कारण इसे पूरा करने में सफलता नहीं मिली। संस्कृत साहित्य में आता है कि **"समानशील व्यसनेषु सख्यम्"** अथवा **"संसर्गजा दोषगुणाः भवन्ति"**। अर्थात् समानशील वालों में मित्रता होती है अथवा यूँ कहें कि संसर्ग से ही व्यक्ति में गुण-दोष आते हैं। मुन्शीराम ने जैसे ही शैशवावस्था को पार कर युवावस्था की दहलीज पर कदम रखा, तो उनके जीवन में अनेक दुर्व्यसनों ने जगह बना ली। मुन्शीराम मद्यपान ओर मांसाहार जैसी बुराइयों की दलदल में फँस गये। जब नानक चन्द जी ने अपने पुत्र को विकारों का शिकार होते देखा तो वे चिन्तित हुए तथा अपने पुत्र को बुराइयों के जाल से मुक्त कराने का उपाय सोचने लगे। इसी बीच नानक चन्द जी को महर्षि दयानन्द सरस्वती का प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिला। ऋषि के ओजस्वी वक्तव्य को सुनने के बाद नानक जी को यह समझते देर न लगी कि ऋषिवर का सान्निध्य पथ से भटके हुए मुन्शीराम के लिए वरदान सिद्ध होगा क्योंकि जो अपनी वाणी के बल से अपने तेज के बल से, विद्या के बल से, चरित्र के बल से तथा अपने योग के बल से राष्ट्र में जागृति ला सकता है, पराधीनता के विरुद्ध स्वाधीनता के लिए राष्ट्र में क्रान्ति ला सकता है, पाखण्ड की जड़ों को हिला सकता है, महिला तथा शूद्रों (दलितों) को वेद पढ़ने का यज्ञोपवीत पहनने का समान अधिकार दिला सकता है तथा जो

www.thearyasamaj.org

शास्त्रार्थ सङ्ग्राम का अजेय महारथी है, उसके लिए एक भटके युवा को सही मार्ग पर लाना कौन सा कठिन काम है। प्रिय पाठकगण! ऋषि के सान्निध्य के बाद मुन्शराम में जो अप्रत्याशित परिवर्तन हुए, उसके आधार पर मैं कह सकता हूँ कि नानक जी की महर्षि से उपरोक्त आशा अप्रत्याशित नहीं थी। नानक जी ने अपने पुत्र मुन्शीराम को शहर बरेली में विराजमान ऋषि के विषय में बताया तथा उसे विराट व्यक्तित्व के धनी से (ऋषिवर से) मिलने का आदेशात्मक परामर्श दिया। युवा मुन्शीराम ने पिता के आदेश का पालन श्रद्धा से किया और चल पड़ा अपने विकारग्रस्त जीवन का उद्धार करने के लिए उस जगदुद्धारक और सुधारक के पास। ऋषि तो पारस मणि थे, जिनके सान्निध्य से लोहा भी सोना बन जाता था। कितने लोहों को ऋषिवर के पावन सामीप्य से स्वर्णिम स्वरूप मिला, मैं यहाँ उनकी गणना न तो करूँगा और न ही कर पाऊँगा। मैं तो यहाँ उस सोने की बात करना चाहता हूँ, जो सोना उस पारसमणि का सान्निध्य पाकर सोना कुन्दन बन गया क्योंकि सोना तो वो पहले से था ही अन्तर सिर्फ इतना सा था कि उस सोने पर विकारों की मलिनता की परत जमी हुई थी। जब वह सोना कुन्दन बना होगा, तो उस स्वर्णकार को कितनी प्रसन्नता हुई होगी, जो अपने सोने से विकारों की मलिन परत को हटाने की न जाने कब से कोशिश कर रहा था लेकिन ऋषि के सामीप्य ने न केवल सोने से मलिनता की परत को हटाया, मिटाया अपितु सोने को कुन्दन बना दिया। स्वर्णकार को कितनी प्रसन्नता हुई होगी इसका अनुमान लगाने का काम मैं अपने पाठकों की मेधा पर छोड़ता हूँ। जिस मुन्शीराम को पिता बुराइयों से नहीं बचा पाए, जिस मुन्शीराम को पत्नी का पुरुषार्थ भी नहीं बचा पाया, उस मुन्शीराम को ऋषि के कुछ समय के मिलन ने न केवल दुर्गुणों, दुर्व्यसनों से मुक्त कराया, अपितु उसके भावी जीवन की ऐतिहासिक दिशा भी निर्धारित कर दी। दिशा ऐसी निर्धारित हुई कि आपने अपने जीवन को सर्वमेध यज्ञ का होता बना लिया। स्वतन्त्रता आन्दोलन, शुद्धि आन्दोलन से आपका चोली-दामन का सम्बन्ध बन गया या मैं यह कहूँ कि आन्दोलन और आप एक दूसरे के पहलू बन गये। आप द्वारा स्थापित और सञ्चालित गुरुकुल काँगड़ी आर्ष शिक्षा प्रणाली के केन्द्र के साथ-साथ देशभक्तों द्वारा चलाए जा रहे स्वतन्त्रता आन्दोलन का भी मुख्य केन्द्र था, जिसके कारण गुरुकुल काँगड़ी अंग्रेजी शासन के निशाने पर रहता था। चाहे गढ़वाल के दुर्भिक्ष पीड़ित हों, चाहे दिल्ली के अन्याय पीड़ित मुसलमान हों, चाहे धौलपुर के समाज मन्दिर को गिराने से विक्षुब्ध आर्य जनता हो, चाहे गुरु के बाग में धर्मयुद्ध में लगे सिख हों या सदैव से पद दलित दक्षिण की अस्पृश्य जनता हो सभी के लिए उन्होंने अपने मन में एक समान दर्द अनुभव किया। स्वामी श्रद्धानन्द वीतराग, सहनशीलता और निर्भीकता की प्रतिमूर्ति थे। ३० मार्च, १९१९ को आपने अंग्रेजी शासन द्वारा लाये गये देश विरोधी कानून "रोलेट एक्ट" के विरुद्ध छिड़े राष्ट्रव्यापी विशाल जुलूस का न सिर्फ नेतृत्व किया, अपितु उसे रोकने आयी गोरी सेना के सामने अपना सीना खोलकर दहाड़ते हुए / ललकारते हुए कहा - "हिम्मत है तो चलाओ गोलियाँ संन्यासी का सीना खुला है।" किसी कवि ने ठीक ही कहा है– **"महात्मा धर्मार्थं न गणयति दुःखं न च- सुखम्"** अर्थात् जो धुन के धनी महात्मा होते हैं, वे सत्य, न्याय, धर्म, मानवता और कर्त्तव्य पालन में आने वाले सुख और दुःख की परवाह किये बिना अपने पथ पर निर्भीकता के साथ कदम बढ़ाते हैं। स्वामी जी उन्हीं उच्च कोटि के महापुरुषों की श्रेणी में आते हैं। राजनीतिक दृष्टि से भी आपका व्यक्तित्व परिपक्व था। यही कारण है कि आपने कई बार राजनीतिक सम्मेलनों, अधिवेशनों, यात्राओं तथा आन्दोलनों का नेतृत्व, सञ्चालन तथा अध्यक्षता की। मैं इसे साम्प्रदायिक सद्भाव की मिसाल कहूँ अथवा अपने चरितनायक के विराट व्यक्तित्व का आकर्षण कि जिसके कारण दिल्ली की ऐतिहासिक जामा मस्जिद से आपका

शेष पृष्ठ १० पर

www.thearyasamaj.org

राष्ट्र की अस्मिता संकट में

(पं० विवेकानन्द शास्त्री,आर्यसमाज रमाला,जिला-बागपत-उ०प्र०)

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।
ते लोक पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना।।

यजु०।। अ० २०/ मन्त्र २५।।

जिस देश में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य परमात्मा की व्यवस्था को सर्वोपरि रखते हुए आपसी मैत्री भाव से सामंजस्य बिठा कर राष्ट्र के हितार्थ कार्य करते हैं, उस राष्ट्र की प्रजा पुण्य को प्राप्त करती है। वहाँ सदैव दिव्य गुणों से युक्त सदाचारी विद्वानों का वास होता है।

उपरोक्त मन्त्रानुसार क्या ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य परमात्मा की व्यवस्था को आर्यावर्त में कायम रख पाये हैं? परमात्मा की आज्ञा का पालन कर पाये हैं? यदि ऐसा होता, तो आर्यावर्त का पतन हरगिज न होता। वेदानुकूल वर्ण व्यवस्था का पालन न होना ही आर्यावर्त के पतन का कारण बना है। वैदिक संस्कृति को छिन्न-भिन्न करने में आर्यों का हिन्दु बन जाना भी एक बड़ा कारण है

किसी कवि ने ठीक ही कहा है-

अपनी ही निगाहों से हमने अपना ही चमन जलते देखा।
अपना मधुवन जलते देखा, अपना उपवन जलते देखा।
बस्तियाँ जलाने वालों को कोई दोष न दे तो अच्छा है।
घर के चिरागों से हमने, ये घर आंगन जलते देखा।

महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं कि- इस राष्ट्र का पतन महाभारत से एक हजार वर्ष पूर्व से होता आ रहा है। आर्यों के हृदय पटल आलस्य और प्रमाद के कारण दूषित हो गये, तो वह विकार हिन्दू रूप में परिवर्तित हो कर उभरा। जिसके अन्दर विकार रूपी फोड़ा उत्पन्न हुआ, उस फोड़े में अज्ञानता, रूढ़िवादिता, जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद के भयंकर कृमिकीट उत्पन्न होकर रेंगने लगे। परमात्मा द्वारा स्थापित वैदिक धर्म को नष्ट करने लगे। जिसका परिणाम विश्व से आर्यों का चक्रवर्ती साम्राज्य नष्ट हो गया। यवन मलेच्छों की उत्पत्ति हो गयी, जो कैंसर रोग की तरह सम्पूर्ण विश्व में फैल गये। यवन मलेच्छों ने परमात्मा की मूल व्यवस्था को जाना नहीं। ईसाई और इस्लाम मत-पन्थ बना कर सम्पूर्ण विश्व में अविद्या अन्धकारमय कर्मों का विस्तार करके परमात्मा की व्यवस्था के विरुद्ध मनुष्यों को चला कर सत्य धर्म की नींव को उखाड़ने में जी जान से जुटे हुये हैं।

अंग्रेजों ने आर्यावर्त की संस्कृति को नष्ट करने के लिए तत्कालीन भारतीय कांग्रेस पार्टी के मुख्य नेताओं के मनोमस्तिष्क में ऐसा बीज बोया कि भारत आज तक अपनी प्राचीन धर्म संस्कृति व भाषा को पुनः नहीं अपना सका। इन नेताओं की कृपा से वैदिक धर्म संस्कृति और हिन्दी भाषा पर ऐसा पक्षाघात किया कि सारी कांग्रेस पार्टी के सदस्य विदेशी धर्म संस्कृति के ऐसे गुलाम बन गये कि हिन्दू होकर भी हिन्दू समाज पर ही कुठाराघात करने में दिन-रात जुटे हुए हैं और राम-कृष्ण एवं ऋषि-महर्षियों के स्वप्न को धूल में मिलाकर लार्ड मैकाले के स्वप्न को साकार करने में लगे हैं। दुर्भाग्य ये है कि अन्य राजनैतिक पार्टियाँ भी न्यूनाधिक कांग्रेस का ही अनुसरण कर रही हैं।

शेष हिन्दू लोगों की बुद्धि विकृत होकर नाना मत पन्थों में उलझ-उलझ कर अपनी प्राचीन व सर्वप्रथम वैदिक धर्म संस्कृति को समाप्त करने में अहम भूमिका निभा रहे हैं। अपने ही मधुवन को उजाड़ने में राजनैतिक उल्लुओं का साथ निभा रहे हैं। नाना मत-पन्थों के

ठेकेदार मानव समाज को गुमराह करके वेद- विरुद्ध रास्तों का संचालन करके राष्ट्र को खोखला कर रहे हैं। वेद की वर्णाश्रम व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने में लगे हुए हैं।

विभिन्न मत-पन्थों के ठेकेदारों के इशारों पर कठपुतलियों की तरह नाचने वाले नर-नारियों को दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों पर नित्यप्रति आसानी से देखा जा सकता है। इन लोगों को नहीं मालूम कि सत्य ज्ञान गंगा को आदि काल में ही गुरुओं का गुरु परमपिता परमात्मा पहले ही बहा चुका है, जो कि वेद के रूप में हमारे सामने मौजूद है। हमें वेदोपदेश के अतिरिक्त किसी का आश्रय लेने की आवश्यकता नहीं है। पतंजलि मुनि योगदर्शन में कहते हैं - **''स एष पूर्वेषामपि गुरु कालेनानवच्छेदात् ।''** वह पूर्व गुरुओं का भी गुरु परमात्मा जो कभी काल के गाल में नहीं समाता, उस परमात्मा ने पहले सृष्टि की रचना की फिर मानव को उत्पन्न किया और मानवों में सर्वश्रेष्ठ पवित्र आत्माओं से युक्त अग्नि, वायु, अंगिरा, आदित्य आदि ऋषियों के पवित्र हृदय में अपना प्रकाश करके उन्हें वेदों का ज्ञान प्रदान किया। उन ऋषियों ने परमात्मा का उस ज्ञान को सुनकर ब्रह्मादि अन्य ऋषियों को वेदज्ञान प्रदान किया। उस वेद विद्या को छोड़कर आज का मानव अज्ञानता की दलदल में फंस कर गुरूडम की आंधी का शिकार हो गया है। और पाप का भागीदार बन गया है।

इस राष्ट्र पर मंडरा रहे विनाशकारी खतरे से बचाने के लिए परमात्मा की व्यवस्था को वेदानुसार कायम करने के लिए वैदिक सत्यनिष्ठ ब्राह्मण, क्षत्रियों का निर्माण करने की पुनः आवश्यकता है। अन्यथा मिथ्या प्रलाप आर्यावर्त की सुख-शान्ति समृद्धि को निगल जायेगी। लार्ड मैकाले के स्वप्न को साकार करने वाली सभी राजनैतिक दलों के कुचक्र को समाप्त न किया गया तो भारत प्रजातन्त्र की नाव ढोंग-पाखण्ड मुस्लिम प्रेमरूपी सागर में डूब जायेगी।

हे ईश्वर! इस आर्यावर्त देश को अविद्या, ढोंग, पाखण्ड और अधर्म से आप ही बचा सकते हो। अपनी ज्ञानगंगा की पावन धारा से इस आर्यावर्त राष्ट्र का उद्धार कर दीजिए।

❑❑

पृष्ठ ८ का शेष

देश की जनता के लिए वेदोपदेश हुआ। आपके व्यक्तित्व का हर पहलू चाहे ईश्वर के प्रति आस्था हो, चाहे राष्ट्रोत्थान के लिए सर्वतोभावेन समर्पण हो, चाहे पारिवारिक व सामाजिक दायित्वों का सफलता- पूर्वक निर्वहन हो, चाहे निजी व सार्वजनिक जीवन में आने वाली आन्तरिक तथा बाह्य चुनौतियों से जूझने की क्षमता हो, चाहे मानवता, सत्यता और न्याय के प्रति दृढ़ता हो, चाहे ऋषिवर के कार्यों के प्रति दृढ़ इच्छाशक्ति हो तथा चाहे प्राणिमात्र के प्रति कल्याण की उदात्त भावना हो उनके उपरोक्त समस्त गुण युगों-युगों तक युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन करते रहेंगे। क्या नेता, क्या लेखक, क्या कवि, क्या साहित्यकार, क्या देश के, क्या विदेश के, स्वामी जी के प्रशंसकों की तथा स्वामी जी के व्यक्तित्व से प्रभावित महापुरुषों की सूची बहुत बड़ी है। महात्मा गान्धी, मदन मोहन मालवीय, सरोजिनी नायडू, मुन्शी प्रेम चन्द, सरदार पटेल, लाला लाजपतराय, गणेश मावलंकर तथा मौलाना मुहम्मद अली जैसे व्यक्तित्व स्वामी जी से अत्यन्त प्रभावित थे। आचार्य भतृहरि ने ठीक ही कहा है- **"सः जातो येन जातेन याति वंश समुन्नतिम् ।''** अर्थात् इस संसार में आना उसी का सार्थक है, जिसके आने (जन्म) से वंश ने, जाति ने, समाज ने, और राष्ट्र ने उन्नति प्राप्त की हो। स्वामी श्रद्धानन्द जी का जीवन उक्त कसौटी पर पूर्णतः खरा उतरता है। उस महान् वीर बलिदानी को विनम्र श्रद्धांजलि।

❑❑

www.thearyasamaj.org

एक हजार वर्ष पूर्व भारत के हिन्दुओं की जीवन शैली

(कृष्ण चन्द्र गर्ग, पंचकूला, दूरभाष - 0172-4010679)

यह लेख अल-बिरूनी की एक पुस्तक 'भारत' के आधार पर लिखा गया है। अल-बिरूनी ईरानी मूल का मुसलमान था। उसका जन्म सन् ९७३ में हुआ था। वह भारत में कई वर्ष तक रहा था। उसने उस समय के भारत के सम्बन्ध में इस पुस्तक में विस्तार से लिखा है।

मूर्तिपूजा- भारत में निम्न वर्ग के अशिक्षित लोगों, जिनका अधिक समझ नहीं है के लिए ही मूर्तियाँ स्थापित की जाती थीं। दर्शनशास्त्र और धर्मशास्त्र का अध्ययन करने वाले विद्वान् लोग तो अमूर्त ईश्वर की ही उपासना करते हैं। ईश्वर को दर्शाने के लिए बनाई गई मूर्तियों की अराधना तो वे स्वप्न में भी नहीं कर सकते।

वेद- ब्राह्मण वेद का पाठ बिना उसे समझे करते हैं। वैसा ही वे कण्ठस्थ भी कर लेते हैं और वही एक से सुनकर दूसरा याद कर लेता है। उनमें से थोड़े ही ऐसे हैं, जो उसकी टीका भी पढ़ते हैं और वे तो गिने-चुने ही होंगे, जिन्हें वेद की विषयवस्तु और उसके भाष्य पर ऐसा अधिकार हो कि वे उस पर कोई शास्त्रार्थ कर सकें।

ब्राह्मण क्षत्रियों को वेद की शिक्षा देते हैं। क्षत्रिय उसका अध्ययन तो कर सकते हैं, लेकिन उन्हें उसकी शिक्षा देने का अधिकार नहीं। वैश्यों और शूद्रों को तो वेद को सुनने की भी मनाही है, उसके उच्चारण और पाठ की तो बात दूर है। यदि उनमें से किसी के बारे में यह साबित हो जाए कि उसने वेद-पाठ किया है, तो ब्राह्मण उसे दण्डनायक के सामने पेश कर देते हैं और दण्डस्वरूप उसकी जीभ कटवा दी जाती है।

जातपात- क्षत्रिय प्रजा का शासन करता है और उसकी रक्षा करता है। वैश्य का काम खेती करना, पशुपालन है। शूद्र ब्राह्मण के सेवक जैसा होता है, जो उसके काम की देखभाल और उसकी सेवा करता है।

प्रत्येक मनुष्य जो कोई ऐसा व्यवसाय करने लगता है, जो उसकी जाति के लिए वर्जित है, जैसे ब्राह्मण का व्यापार करना, शूद्र का खेती करना तो, वह ऐसे पाप या अपराध का दोषी माना जाता है, जिसे वे चोरी जैसा ही समझते हैं।

यदि कोई ब्राह्मण किसी शूद्र के घर कई दिन तक भोजन कर ले, तो उसे जाति से निकाल दिया जाता है और उसे फिर से जाति में शामिल नहीं किया जाता।

जब मुस्लिम देशों से हिन्दू दास भागकर अपने देश और धर्म में वापिस आते हैं, तो उन्हें स्वीकार नहीं किया जाता।

जो लोग हिन्दू नहीं हैं और मनुष्यों का वध करते हैं, पशुओं की हत्या करते हैं और गोमांस खाते हैं , वे मलेच्छ अर्थात् अपवित्र कहे जाते हैं।

पुस्तक लिखना- हिन्दुओं के यहाँ उनके दक्षिण प्रदेश में एक पतला-सा पेड़ खजूर और नारियल जैसा होता है, जिसमें फल लगता है जो खाया जाता है। उसके पत्ते एक गज लम्बे और तीन अंगुल चौड़े होते हैं। वे उसे ताड़ कहते हैं और उन पर लिखते हैं। वे इन पत्तों को एकत्र करके इनको बाँध कर पुस्तक बना लेते हैं और बीच में सुराख करके उसे डोरी से सी देते हैं। इस प्रकार की पुस्तक को पोथी कहते हैं।

हिन्दू अपने ग्रन्थों का प्रारम्भ 'ओ३म्' शब्द से करते हैं। 'ओ३म्' शब्द की आकृति ॐ होती है।

सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण- हिन्दू खगोल शास्त्रियों

को यह बात भली प्रकार ज्ञात है कि पृथ्वी की छाया से चन्द्रग्रहण और चन्द्रमा की छाया से सूर्यग्रहण होता है। लेकिन जनसाधारण हमेशा बड़े जोर-जोर से यह उद्घोष करते हैं कि राहु का सिर ग्रहण का कारण है।

धन, कर तथा ब्याज- खेती, पशु, व्यापार आदि से हुई कमाई में से सबसे पहले राजा को कर देते हैं, कुछ अपने आम खर्चों के लिए अलग रख लेते हैं, कुछ धन विद्वानों और अतिथियों की सेवा के लिए तथा शुभ कार्यों के लिए तथा कुछ भविष्य के लिए आरक्षित रख लेते हैं।

केवल ब्राह्मण सभी करों से मुक्त हैं।

ब्याज लेने की अनुमति केवल शूद्र को है, औरों के लिए मनाही है।

खानपान- मूलतः हिन्दुओं के लिए सभी प्रकार का वध वर्जित है और सभी प्रकार के अण्डे तथा मदिरा की भी मनाही है। शूद्र के लिए मदिरा की अनुमति है।

कुछ लोग भोजन के पश्चात् पान खाते हैं। पान के पत्ते की गर्मी शरीर की उष्मा को बढ़ाती है, पान में लगा चूना हर नम या गीली वस्तु को सुखा देता है और सुपारी दाँतों, मसूड़ों और पेट को मजबूत करती है।

गाय एक ऐसा पशु है, जो मनुष्य के कई काम आता है- यात्रा के समय भार ढोना, जुताई-बुआई में काम आना, घर-गृहस्थी में दूध तथा उससे बनी वस्तुएं देना। इसके अलावा मनुष्य इसके गोबर का इस्तेमाल करता है।

फलित-ज्योतिष- हिन्दू सात ग्रह मानते हैं। उनमें बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा को सर्वथा शुभ मानते हैं। शनि, मंगल और सूर्य को सर्वथा अशुभ मानते हैं। ग्रहों में राहु को भी शामिल कर लिया है, जो वास्तव में ग्रह नहीं है। वे जन्मपत्री, फलित-ज्योतिष आदि को मानते हैं।

विवाह- हिन्दुओं में बहुत ही छोटी आयु में विवाह हो जाता है। इसलिए माता-पिता ही अपने पुत्र-पुत्रियों के विवाह की व्यवस्था करते हैं। विवाह के समय खुशियाँ मनाने के लिए गाजे-बाजे लाए जाते हैं। पति और पत्नी का विछोह मृत्यु होने पर ही हो सकता है क्योंकि उनके यहाँ विवाह-विच्छेद (तलाक) की कोई परम्परा नहीं है। लड़का-लड़की का एक ही गोत्र में विवाह नहीं होता। इनकी कम से कम पाँच पीढ़ी में भी विवाह नहीं होता।

विधवा- यदि किसी स्त्री का पति मर जाए, तो वह दूसरे पुरुष से शादी नहीं कर सकती। उसे दो में से एक विकल्प प्राप्त है- चाहे तो आजीवन विधवा रहे या सती हो जाए। सती होना श्रेयस्कर माना जाता है क्योंकि विधवा जब तक जीवित रहती है, उसके साथ दुर्व्यवहार होता रहता है। जहाँ तक राजाओं की पत्नियों का सम्बन्ध है, वे तो सती हो जाने की ही अभ्यस्त हैं, चाहे वे ऐसा चाहती हों या नहीं। इस सन्दर्भ में केवल उन स्त्रियों को अपवाद रूप में छोड़ देते हैं, जो वयोवृद्ध हों और जिनकी सन्तान हो। इसका कारण यह है कि पुत्र अपनी माता के संरक्षण के लिए उत्तरदायी होता है।

विविध- हिन्दू पायजामा नहीं पहनते, उसके स्थान पर धोती पहनते हैं, जो इतनी लम्बी होती है कि उनके पैर तक ढक जाते हैं। वे एक दूसरे का जूठा नहीं खाते। जिन बर्तनों में वे खाते हैं, वे यदि मिट्टी के होते हैं, तो खाने के बाद उन्हें फेंक देते हैं। पुरुष कानों में छल्ले, बांहों में कड़े, अनामिका और पैरों के अंगूठों में स्वर्ण मुद्रिकाएं पहनते हैं। वे अपनी कमर की दाहिनी ओर कुठार बाँधते हैं। वे यज्ञोपवीत पहनते हैं, जो बांए कन्धे से कमर की दाहिनी ओर तक जाता है। सभी प्रकार के कार्य-कलाप और आपातकाल में वे स्त्रियों से सलाह लेते हैं। मृत व्यक्ति का ऋण उसके वारिस को चुकाना पड़ता है चाहे मृत व्यक्ति ने कोई सम्पत्ति छोड़ी हो या नहीं। मृत व्यक्ति के प्रति वारिस के लिए कई

शेष पृष्ठ १६ पर

www.thearyasamaj.org

लेडी टेरेसा बनी संत टेरेसा

(राजीव चौधरी)

वेटिकन के कारखाने से संत बनकर निकलना कोई बड़ी बात नहीं। जब भी वेटिकन को ईसाइयत दरकती दिखाई देती है, तो वहाँ अचानक एक संत बना दिया जाता है। इस बार भी ऐसा ही हुआ और वर्षों तक भारत में गरीब भोले-भाले लोगों की गरीबी पर ईसाइयत खड़ी करने वाली लेडी टेरेसा अब मदर टेरेसा को संत बनाकर भारत के अन्धविश्वास को बड़ी भारी हवा दी है। वेटिकन सिटी टेरेसा को संत घोषित करेगा। ऐसा नहीं है कि यह सब एक दम से हुआ जबकि पिछली सरकारों और भारत के तमाम तथाकथित संतों और धर्मुगुरुओं को इसकी जानकारी थी किन्तु आर्यसमाज के अलावा कोई भी इस अन्धविश्वास के खेल के सामने बोलने से कतरा रहा है। डा० श्रीरंग गोडबोले जिनका लेख मराठी साप्ताहिक पत्रिका के ७ दिसम्बर, २००३ के अंक में छपा था, तब उन्होंने इस पर कटाक्ष करते हुए कहा था कि वर्तमान पोप को संत निर्माण करने की अत्यधिक शीघ्रता आ गई है। १९७८-१९९९ के दौरान उन्होंने २८३ संत पद और ८१९ धन्य पद निर्माण किये। उसके बाद मात्र चार वर्ष में यह संख्या ४७७ संत पद और १३१८ धन्य पद तक पहुँच गयी। अभी तक सभी पोपों द्वारा निर्माण किये गये संत पद और धन्य पदों की संख्या की तुलना में इन चार वर्षों की संख्या अधिक है। (इंडियन एक्सप्रेस १४ अक्टूबर, २००३) सिल्वियो ओद्दी नामक ८६ वर्षीय वयोवृद्ध कार्डिनल ने भी स्वयं के संस्मरणों में वेटिकन को 'संत बनाने का कारखाना' जैसी टिप्पणी की है। ये तो ठीक है पर पोप को संत पद प्रदान करने के लिए कैसे लोग पसंद आते हैं? ये भी देखने की वात है। प्रदर्शनी के समय लोगों में दहशत फैलाने वाले और फाँसी की सजा पाए हुए फ्रायर सारानोवा और इसी तरह गुप्त तरीके से काम करने वाले गुप्त कैथोलिक संगठन "ओपस डे' के संस्थापक "जोस मारिया द बलागे" जैसे लोग टेरेसा के साथ संत पद की लाइन में खड़े हैं।

मदर टेरेसा को धन्य पद प्रदान करने का समारम्भ द्वितीय जॉन पॉल के कर कमलों द्वारा वेटिकल में संपन्न हुआ। टेरेसा को संत पद प्रदान करने का यह एक महत्वपूर्ण आयाम है। हिन्दू परम्परा में प्रेममय जीवन, उपदेश और कार्य के आधार पर कोई व्यक्ति सहज रूप से संत कहलाने लगता है। रोमन कैथोलिक परम्परा में किसी भी व्यक्ति को संत कहलाने के लिए विशेष प्रक्रिया से गुजरना होता है।

सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु के कम से कम पाँच वर्ष पश्चात् ही यह प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है और कई वर्षों पश्चात् ही उसे धन्य पद प्राप्त होता है। उस व्यक्ति के द्वारा अतिशयोक्तिपूर्ण दावों की सच्चाई की जाँच हेतु एडवोकेट्स दायबोली (शैतान का वकील) की नियुक्ति होती है। इसके बाद उस व्यक्ति के नाम से किये गये सभी चमत्कारों के झूठ-सच की जाँच होती है। कई दशकों तक चलने वाली इस प्रक्रिया के बाद ही उसे धन्य पद दिया जाता है। इसके बाद एक और चमत्कार के सबूत मिलने के पश्चात् ही उसे संत पद प्रदान किया जाता है। संत पद प्राप्त व्यक्ति की मर्यादित रूप से पूजा की जा सकती है।

टेरेसा के सम्बन्ध में वर्तमान पोप ने इस पूरी प्रक्रिया की अनदेखी की है। १९९७ में टेरेसा की मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् ही यह प्रक्रिया प्रारम्भ कर ली गयी। टेरेसा के मामले में वकील दायबोसी की नियुक्ति नहीं हुई। ऐसा दावा किया गया कि मोनिका बेसरा

www.thearyasamaj.org

नाम की एक महिला के पेट में कर्क रोग (कैंसर) की एक गाँठ थी। ननों ने उस महिला को टेरेसा के कमरे में ले जाकर टेरेसा की प्रतिमा के कमर से बाँध दिया और प्रार्थना की। उस दिन टेरेसा का प्रथम स्मृति दिवस था। इसके पश्चात् अद्‌भुत चमत्कार हुआ। मोनिका बेसरा के पेट में स्थित कैंसर की गांठ दूसरे दिन अदृश्य हो गयी। पोप ने पिछले वर्ष इस चमत्कार को मान्यता दी।

मोनिका बेसरा का इलाज कर रहे और संभाल रखने वाले डॉ० रंजन मुस्तकी के अनुसार यह गाँठ कर्क रोग (कैंसर) की नहीं होकर क्षय रोग (टी०बी०) की थी और डॉक्टरी चिकित्सा तथा दवाओं की वजह से यह गाँठ ठीक हुई। मोनिका बेसरा के पति ने अक्टूबर, २००२ में स्वयं "टाइम" मैगजीन को एक मुलाकात दी थी और उन्होंने कहा था कि उनकी पत्नी चमत्कार के कारण नहीं बल्कि चिकित्सा और दवाइयों की वजह से स्वस्थ हुई है। मुझे इस प्रकार के सारे तमाशे बंद करवाने हैं। मदर टेरेसा की प्रतिमा की कमर में बाँधने से उनकी पत्नी की वेदना कम हुई, यह उन्होंने स्वीकारा। परन्तु सामान्य स्थिति में भी उनको वेदना कम ज्यादा होती ही थी।

परन्तु अब मोनिका का पति दूसरा ही राग अलाप रहा है। लन्दन से प्रकाशित दैनिक "न्यू स्टेटमैन" (२७ अक्टूबर २००३) ने मोनिका के पति के बदले हुए सुर पर मार्मिक टिप्पणी की है। जमीन खरीद के लिए (मोनिका के पति को) को पैसे दिये गये तथा उनकी पांच संतानों की शिक्षा का खर्च योगिनियाँ उठा रही हैं। क्या इसके चलते ही (मोनिका के पति ने) अपना निवेदन बदला है?

परन्तु पोप कैसे एकाग्रचित है? टेरेसा को किसी भी हालत में संत पद प्रदान करना ही है, ऐसा उन्होंने अपने मन में निश्चित कर लिया है। इसलिए पोप ने ऐसे मुश्किल में डालने वाले प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए। दूसरा चमत्कार होगा ही और टेरेसा को संत पद प्राप्त होना ही है। इस बारे में किसी प्रकार की शंका रखने का कोई कारण नहीं है। वर्तमान पोप को संत निर्माण करने की अधिक जल्दी है। वर्तमान पोप संत पद का थोक में वितरण करने के लिए इतने उत्सुक क्यों हैं? संत पद प्रदान करने की प्रक्रिया अभी तक यूरोप-केन्द्रित ही रही है। हिंदुस्तान में ईसाइयों के पाँच सौ वर्ष के इतिहास में वैटिकन को भारत में से एक भी व्यक्ति संत पद प्राप्त करने हेतु पसंद नहीं आया। फादर जोसेफ वाज नाम के गोवा के मिशनरी को धन्य पद प्राप्त करने के लिए उनकी मृत्यु के बाद लगभग २४८ वर्षों तक इंतजार करना पड़ा, इसके बाद उन्हें धन्य पद प्राप्त हुआ।

यूरोप में ईसाइयत की इमारत टूट गयी है। वहाँ के चर्च खाली पड़े हैं। स्वाभाविक रूप से इस शताब्दी में पूरे एशिया खास कर हिंदुस्तान में धर्मान्तरण बढ़ाने की पोप की योजना है। वैटिकन जैसे धार्मिक स्थान के बदले में व्यापारी तत्वों के आधार पर चलने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियों को देखने से पोप के इन कारनामों को समझा जा सकता है। अपना माल बेच कर लाभ कमाने के लिए जैसे कोई होशियार कंपनी "ब्रांड" को तलाशती है और मार्केटिंग के आधार पर उस ब्रांड को लोकप्रिय बनाती है, उसी तरह वैटिकन "मदर टेरेसा" के ब्रांड का उपयोग हिन्दुओं के धर्मान्तरण के लिए करेगा यह निश्चित है।

मदर टेरेसा वर्तमान युग की महान सन्त थी, ऐसा प्रचार योजनाबद्ध तरीके से मिशन, चर्च और प्रचार माध्यमों द्वारा हो रहा है। जिसमें मीडिया भी शामिल हो चुकी है। भारत के असहाय हिन्दुओं के उद्धार के लिए स्थानीय हिन्दू नहीं, बल्कि एक विदेशी ईसाई महिला दौड़ कर आयी, ऐसा दुनिया को धोखा दिया जा रहा है। मदर टेरेसा को धन्य पद प्रदान करने के लिए उनके कार्यों का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन आवश्यक था परन्तु उनके

www.thearyasamaj.org

विचारकों ने आनन्द का ऐसा गुब्बारा फुलाया कि उन्हें प्रशंसा के फूल चढ़ाने के अलावा कुछ सूझा ही नहीं।

ईश्वर के अस्तित्व को ही नकारने के प्रयास करने वाले लोगों ने टेरेसा के तथाकथित चमत्कार का कोई विरोध नहीं किया। मदर टेरेसा के कलकत्ता स्थित केंद्र के सामने अंधश्रद्धा निर्मूलन करने वाले ठेकेदारों ने भी कोई प्रदर्शन किया हो, ऐसा सुनने में नहीं आया। सिर्फ नाम मात्र के लोगों ने टेरेसा के तथाकथित चमत्कार का विरोध किया। मदर टेरेसा का जीवन एक चमत्कार था, उन्हें अलग से कोई चमत्कार बताने की आवश्यकता ही नहीं, ऐसा उनका तर्क था। इसका मतलब यह था कि उनको टेरेसा के कार्यों के सम्बन्ध में कोई विरोध नहीं था।

इस सब कोलाहल के बीच इंग्लैण्ड में रह रहे डॉ0 अरूप चेटरजी नाम के बंगाली डॉक्टर ने टेरेसा के विरोध में निर्भयतापूर्वक आवाज उठायी। "मदर टेरेसा द फाइनल वर्डिक्ट" नाम की उनकी ४२६ पन्नों की पुस्तक में सबूतों के साथ टेरेसा पर गंभीर आरोप लगाये हैं। याद रहे कि डॉ० अरूप चेटरजी कोई हिन्दुनिष्ठ व्यक्ति नहीं है, बल्कि पूर्ण रूप से नास्तिक व्यक्ति है। जितना लाभ टेरेसा की वजह से कोलकाता को हुआ, उससे कई गुना लाभ कोलकाता की वजह से टेरेसा को हुआ। ऐसा डॉ० अरूप चेटरजी का आरोप है। टेरेसा की वजह से कोलकाता को "नर्क पुरी" के नाम से पूरी दुनिया में बदनाम किया गया। डॉ० अरूप चेटरजी ने २१ फरवरी को अपने सभी आक्षेप संत समिति के सामने खड़े किये हैं।

१. टेरेसा की लोगों के लिए एम्बूलैंस गाड़ियाँ अधिकतर नन्स के प्रवास के लिए होती थीं।

२. मदर टेरेसा के केंद्र में केवल कैथोलिक प्रार्थना की ही छूट थी, उनके यहाँ आये हुए निसहाय लोगों को अपनी पद्धति के हिसाब से प्रार्थना करने पर प्रतिबन्ध था।

३. नोबल पुरस्कार प्राप्त करते समय दिए हुए अपने भाषण में टेरेसा ने परिवार नियोजन के प्राकृतिक तरीके से कोलकाता में ६ वर्ष में ६१,२७३ से भी कम शिशुओं का जन्म हुआ, ऐसा उन्होंने दावा किया परन्तु इसका कोई सबूत नहीं है।

४. "लेडीज होम जर्नल" नाम के अमेरिकन मैगजीन (अप्रैल १९९६) के अनुसार टेरेसा ने ऐसी इच्छा व्यक्त की थी कि उनकी मृत्यु उनके कोलकाता केंद्र में ही हो, जैसी एक गरीब की होती है। परन्तु अपना इलाज कराने के लिए टेरेसा ला जोला, कैलिफोर्निया स्थित स्क्रिप क्लिनिक, रोम स्थित जेम्मेली हॉस्पिटल, कोलकाता स्थित बेलव्यू और वुडलैंड जैसे महंगे हस्पतालों में भर्ती हुई।

५. मोतियाबिंद के ऑपरेशन के लिए ५००० डॉलर का इलाज महंगा है, यह कर टाल दिया जो अमेरिका स्थिति पिट्टसबर्ग में आया हुआ सेंट फ्रांसिस मेडिकल सेंटर ने ऑफर किया था परन्तु इस बात की इतनी चर्चा होने के तुरंत बाद अगले ही वर्ष न्यूयॉर्क के सैंट विन्सेंट हॉस्पिटल में अत्यधिक रकम खर्च कर करवा लिया।

६. सुप्रसिद्ध बी बी सी पत्रकार क्रिस्तोफेर हिन्चेसे द्वारा लिखित जग प्रसिद्ध पुस्तक "डी मिशनरी पोजीशन, मदर टेरेसा इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस" (वर्सो प्रकाशन १९९८) में इससे भी गंभीर आरोप लगाये गये हैं।

चार्ल्स कित्तिंग नाम का एक अमेरिकन लोफर धोखाधड़ी के आरोप में दस वर्ष की सजा भुगत रहा है। इसने कई निवेशकों के लगभग ९ लाख डॉलर्स धोखा देकर हजम कर लिए। इसको मदर टेरेसा ने १५ लाख अमेरिकन डॉलर्स दान में दिए हैं। यह अपना खुद का हवाई जहाज मदर टेरेसा को उपयोग हेतु देता था। इसके बदले में टेरेसा के नाम का उपयोग करने की छूट टेरेसा ने दे रखी थी।

टेरेसा ने व्यक्तिगत क्रॉस भी उसे भेंट में दिया था।

उस पर चल रहे मुकदमे के दौरान मदर टेरेसा ने सम्बन्धित न्यायाधीश को एक पत्र लिख कर उसे माफ करने को कहा था। टेरेसा ने लिखा कि तुम अपने हृदय में विचार करो और यह सोचो कि इसकी जगह अगर ईसा होते, तो तुम क्या करते। न्यायाधीश ने टेरेसा को गुनाहगार द्वारा किये गये सभी अपराधों की सूची तथा सरकारी वकील द्वारा पेश किये पक्ष भेज दिए और अत्यन्त मार्मिक कटाक्ष करते हुए जवाब दिया अगर इसकी जगह ईसा होते, तो स्वयं को मिली हुयी लूट की रकम वास्तविक मालिक को वापस कर देते, आप भी यह रकम रखोगे नहीं और आपकी इच्छा हो, तो मैं इस रकम के सच्चे मालिक के साथ आपका सम्पर्क करवा सकता हूँ। इस मामले में टेरेसा ने आगे कुछ नहीं किया।

दलित ईसाईयों को आरक्षण मिले, इसके लिए टेरेसा ने राजघाट पर धरना दिया था। जब इस माँग पर टिप्पणी और आलोचना होने लगी तो मुकरते हुए भोली बनते हुए बताया कि इस कार्यक्रम के उद्देश्य की मुझे जानकारी नहीं थी। बाद में पता चला कि उनको उस कार्यक्रम का औपचारिक आमन्त्रण पत्र भेजा गया था। निरपेक्ष सेवा करने वाले के सामने जाति धर्म का भेद किये बगैर नतमस्तक होना ही चाहिए परन्तु टेरेसा की सेवा को निरपेक्ष नहीं कहा जा सकता, यह खेदपूर्वक कहना पड़ता है। ❑❑

पृष्ठ १२ का शेष

भोज भी कर्त्तव्य हैं। हिन्दू अपने शवों का दाह संस्कार करते हैं। परन्तु तीन वर्ष से कम आयु के बच्चों के शव जलाए नहीं जाते।

हिन्दुओं के त्यौहार- वर्ष भर में हिन्दू बसन्त, भाद्रपद तृतीया, भाद्रपद अष्टमी, दीवाली, फाल्गुन पूर्णिमा, शिवरात्रि आदि लगभग बीस त्यौहार मनाते हैं। अधिकतर त्यौहार स्त्रियाँ और बच्चे ही मनाते हैं। उन्हें मनाने का तरीका आज से बहुत भिन्न था। आज का दशहरा, दीवाली की आतिशबाजी, होली के रंग नहीं थे। दीवाली पर श्री राम की अयोध्या वापसी, भाद्रपद अष्टमी पर श्री कृष्ण का जन्म नहीं जुड़े थे।

वास्तव में श्री राम का अयोध्या वापसी का समय कार्तिक मास की अमावस्या नहीं था, वह समय चैत्र मास का था। वाल्मीकि रामायण के अनुसार श्री राम के राज्याभिषेक की तैयारी चैत्र मास में हो रही थी, तभी उन्हें बनवास मिला। अतः वापसी भी चैत्र मास में ही होनी चाहिए क्योंकि वनवास के चौदह वर्ष तभी पूरे हो जाते हैं।

भाद्रपद अष्टमी को हिन्दू एक पर्व मनाते हैं, जो 'ध्रुव गृह' कहलाता है। वे स्नान करते हैं और पौष्टिक अन्न खाते हैं, ताकि उसकी स्वस्थ सन्तान पैदा हो। कार्तिक अमावस्या के दिन दीवाली मनाई जाती है। इस दिन लोग स्नान करते हैं। बढ़िया कपड़े पहनते हैं, एक दूसरे को पान सुपारी भेंट करते हैं और एक दूसरे के साथ दोपहर तक हर्षोल्लास के साथ खेलते हैं। रात्रि को वे हर स्थान पर अनेक दीप जलाते हैं, ताकि वातावरण सर्वथा स्वच्छ हो जाए। इस पर्व का कारण यह है कि वासुदेव की पत्नी लक्ष्मी विरोचन के पुत्र बलि को जो सातवें लोक में बन्दी है- वर्ष में एक बार इसी दिन बन्धन-मुक्त करती है और उसे संसार में विचरण करने की आज्ञा देती है। इसी कारण यह पर्व 'बलिराज्य' कहलाता है। फाल्गुन पूर्णिमा का दिन स्त्रियों का पर्व है, जो 'ओडस' या 'ढोला' अर्थात् 'डोला' कहलाता है। इस दिन वे किसी विशेष स्थान पर आग जलाती हैं, फिर उस आग को गाँव के बाहर फेंक देती हैं। ❑❑

www.thearyasamaj.org

महाप्रतिभा मंडित महापुरुष दयानंद

(महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला)

उन्नीसवीं शताब्दी का परार्द्ध भारत के इतिहास का अपर स्वर्ण प्रभात है। कई पावनं चरित्र महापुरुष अलग-अलग उत्तरदायित्व लेकर इस पुण्य भूमि में अवतीर्ण होते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती भी उन्हीं में एक महाप्रतिभा-मण्डित महापुरुष हैं। शासन बदला, अंग्रेज आये, संसार की सभ्यता एक नए प्रभाव से बही, बड़े-बड़े पण्डित, विश्व-साहित्य, विश्व-ज्ञान विश्व- मैत्री की आवाज उठाने लगे। पर भारत उसी प्रकार पौराणिक रूप के मायाजाल में भूला रहा। इस समय ज्ञानस्पर्धा के लिए समय को फिर आवश्यकता हुई। और दयानन्द का यही अपराजित प्रकाश है। वह अपार वैदिक ज्ञानराशि के आधार स्तम्भ स्वरूप आज भारत के युगान्तर साहित्य में इसी की सत्ता प्रथम है, यही जनसंख्या में बढ़ी हुई है।

चरित्र, स्वास्थ्यं, त्याग, ज्ञान और शिष्टता आदि में जो आदर्श महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज में प्राप्त होते हैं। उसका लेश-मात्र भी अभारतीय पश्चिमी शिक्षा असंभूत नहीं, पुनः ऐसे आर्य में ज्ञान तथा वैदिक अथवा प्राचीन शिक्षा द्वारा मनुष्य उतना उन्नतमना नहीं हो सकता। जितना अंग्रेजी शिक्षा द्वारा होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती इसके प्रत्यक्ष खण्डन हैं। महर्षि दयानन्द जी से बढ़कर भी मनुष्य होता है। इसका प्रमाण प्राप्त नहीं हो सकता। यही वैदिक ज्ञान है कि मनुष्य के उत्कर्ष में प्रत्यक्ष उपलब्धि होती है। यही आदर्श आर्य हमें देखने को मिलता है।

हमें अपने सुधार के लिए क्या- क्या करना चाहिए। हमारे सामाजिक उन्नयन में क्या-क्या और कहा-कहा रुकावटें हैं। हमें मुक्ति के लिए कौन सा मार्ग ग्रहण करना चाहिए। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने बहुत अच्छी तरह समझाया है। आर्यसमाज की प्रतिष्ठा उसकी प्रगति एक दिव्य स्फूर्ति की प्रगति है। देश में महिलाओं, पतितों तथा ब्राह्मणेतर जातियों के अधिकार के लिए महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज से बढ़कर इन नवीन विचारों के युग में किसी भी समाज ने कार्य नहीं किया। आज जागरण भारत में देख पड़ता है। इसका प्रायः सम्पूर्ण श्रेय आर्यसमाज को है। स्वधर्म में दीक्षित करने का यहा इसी समाज से श्री गणेश हुआ है। भिन्न जाति वाले बन्धुओं को उठाने तथा ब्राह्मण क्षत्रियों के प्रहारों से बचाने का उद्यम आर्यसमाज ही करता रहा है। शहर-शहर, जिले-जिले, कस्बे-कस्बे में इसी उदारता के कारण आर्यसमाज की स्थापना हो गई। राष्ट्र भाषा हिंदी के भी स्वामी जी एक प्रवर्तक हैं, और आर्यसमाज के प्रचार की तो यह भाषा ही रही है। शिक्षण के लिए गुरुकुल जैसी संस्था निर्मित हो गई। एक नया ही जीवन देश में लहराने लगा। हमें ऋषियों की संतान होने का सौभाग्य प्राप्त है, और इसके लिए हम गर्व करते हैं। तो कहना होगा कि ऋषि दयानन्द से बढ़कर हमारा उपकार इधर किसी भी दूसरे महापुरुप ने नहीं किया, जिन्होंने स्वयं कुछ भी न लेकर हमें अपार ज्ञान-राशि वेदों से परिचित कर दिया।

(यह लेख महाकवि सूर्य कान्त त्रिपाठी जी निराला द्वारा महर्षि दयानंद सरस्वती जी की पावन स्मृति में लिखा गया था। पाठकों के लिए इस अविस्मरणीय लेख को स्वामी जी की स्मृति में पुनः प्रकाशित किया जा रहा है- डॉ० विवेक आर्य)

❑❑

www.thearyasamaj.org

नेपाल का लाडला वीर

(राजेशार्य आट्टा, मो. - 09991291318)

दिग्दिगन्त में गूँज रहा है, आज दयानन्द का बोलबाला।
आर्यवीरों की पाकर कुर्बानी, है धधक उठी फिर से ज्वाला।।
क्या घूंटी पिलाई लेखराम को, जीवन कौम को होम दिया।
आस्तिकता की दिखा चिंगारी, बना गुरुदत्त को मोम दिया।।
पी-पी ऋषि ने विष के प्याले, बरसा धरती पर सोम दिया।
हँसकर बोली जय हंसराज ने, गुँजा अवनि और व्योम दिया।।
श्रद्धा जगी थी श्रद्धानन्द में, चला घर छोड़कर मतवाला।। १।।

माधवराज जोशी पहुँचे काशी, हो पिपासु ऋषि दर्शन के,
ऋषि से करके प्रश्नोत्तर, लिये मिटा सभी संशय मन के।
कुरीतियों पर किया प्रहार, थीं जमी हुई मन में जन-जन के,
निर्दोष जीवों की बलि चढ़ा, थे पण्डित जुटे पोषण में तन के।।
हाथ में डंडा लेकर माधव, बना जीवों का रखवाला।। २।।

नेपाल में होने लगा खण्डन, बलि श्राद्ध और शराब का,
बाल विवाह, सती प्रथा और अण्डे मांस कबाब का।
हारकर लज्जित पण्डित भागे, न मिलता प्रमाण किताब का,
कोई हल नहीं सूझता है राणा, इसके तर्कशील जवाब का।।
अपमानित कर जोशी जी को, राणा ने कैद में दे डाला।। ३।।

अवसर पा एक रोज जोशी जी, सपरिवार नेपाल से भाग चले,
कैसे कोई रख सके बन्धन में, जब हृदय में क्रांति की आग जले।
गुरुकुल सिकन्दराबाद में, वैदिक साँचे में शुक्रराज ढले,
कैसे राग करे आकर्षित उसको, मन में जिसके विराग फले।।
नेपाल. जा शास्त्री शुक्रराज ने, चमकाया तर्क का फिर भाला।। ४।।

थी मन में भरी तमन्ना भारी, जग में फूंकूंगा नव प्राण,
बलि चढ़ते मासूम जीवों के जीवन का करूँ कल्याण।
शास्त्रार्थ में हार हेमराज ने, राजा की ओर किया प्रयाण,
दयानन्दी कर रहा अशान्त देश को इस पर कोई चलाओ बाण।।
बाहर से यह उजला दिखता, पर मन में भरा हुआ काला।। ५।।

www.thearyasamaj.org

फँस धूर्तों के कपट-जाल में, युद्ध शमशेर ने दिया आदेश,
या तो घर में कैद रहोगे, नहीं तो छोड़ चलो स्वदेश।
मस्ताने ऋषि का स्वच्छन्द पंछी, क्यों बन्धन में सहे क्लेश,
नियम तोड़कर निकल पड़े, वे लगे सुनाने वैदिक सन्देश।।
मैं चाहता हूँ रूढ़ियाँ छोड़कर, देश मेरा बन जाए आला।। ६।।

नेपाल की जनता ने किया स्वागत, उस ऋषि मस्ताने का,
वेद धर्म से था नाता उसका, ज्यों दीपक परवाने का।
पुलिस ने आकर घेरा उसको, दिखाया रास्ता थाने का,
घोर यातनाएँ दीं जेल में, और भोजन पशुओं के खाने का।।
उसी ऋषि से मिलती शक्ति, जो पी गया विष का प्याला।। ७।।

पाँचवें दिन ही मिली सूचना, घर मेनका ने कन्या जायी है,
पति-वियोग में बीमार हो गई, ना घर में एक भी पाई है।
अन्तिम दर्शन कर लूँ पति के, यह इच्छा मन को भायी है,
नहीं अनुमति दी राजा ने, हाय! सरकार हुई कसाई है।।
धर्मवेदी पर प्राण गंवा गई, वह अबला मेनका बाला।। ८।।

माँ से बिछुड़ी बच्ची ने भी, तड़प-तड़प कर छोड़े प्राण,
स्मरण करता हूँ ये बातें, तो चुभती हैं ज्यों तीखे बाण।।
निर्दयता का इससे बढ़कर, होगा क्या कोई और प्रमाण,
फाँसी चढ़ा दो शुक्रराज को, राणा ने यह किया ऐलान।।
कैसे मौत डराए उसको, हो ऋषि लोरी ने जिसको पाला।। ९।।

रहा खाना देखता बाट तभी, कातिल ने हुक्म फरमाया था,
भूखे ही उस आर्यवीर को, अर्धरात्रि में सूली चढ़ाया था।
देख नीचता उन दुष्टों की, काल भी खड़ा शरमाया था,
मैं देश बचाना चाहता था, क्यों तुमने मुझे सताया था।।
'आह' बनेगी अमोघास्त्र यह, 'राजेश' डसेगा विषधर काला।। १०।।

धर्म रहता रहती धरा, साक्षी बनता है आकाश,
बलिदान दे शुक्रराज ने, नाम अमर किया इतिहास।
अज्ञान-तिमिर भयभीत भगा, सत्यार्थ का देश प्रकाश,
लहलहाई खेती दयानन्द की, राजवंश का हुआ विनाश।।
गुरुकुल खुले नेपालधरा पर, टूटा बन्द अविद्या का ताला।। ११।।

❑❑

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द की दृष्टि में नारी

(प्रो० मोनिका आर्या, भिलाई, प्रौद्योगिकी संस्थान दुर्ग, छ०ग०)

महर्षि दयानन्द ने नारी के अत्यन्त उदात्त स्वरूप को अपने ग्रंथों में प्रकट किया है। जब-जब नारी के स्वरूप की उन्होंने चर्चा की है, गार्गी, मदालसा, लोपामुद्रा, मैत्रेयी तथा कैकेयी जैसी संभ्रांत महिलाओं को स्मरण किया है। स्वामी जी ने मनु के स्वर में स्वर मिलाकर कहा है कि जो समाज महिलाओं का सम्मान नहीं करता, वह अपने दैवीय गुणों को नष्ट कर देता है। जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है। जहाँ इनकी अनदेखी की जाती है, वहाँ समस्त क्रियाएँ फलहीन हो जाती हैं। स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में नारी-शिक्षा को अकाट्य प्रमाणों के साथ प्रकट किया है। वे लिखते हैं - "द्विज अपने घरों में लड़कों को यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके यथोक्त आचार्यकुल अर्थात् अपनी-अपनी पाठशाला में भेज दें।" आज आजादी के छः दशक बीत जाने के बाद देश की संसद अनिवार्य शिक्षा की वकालत कर रही है। दूरदर्शी स्वामी दयानन्द सरस्वती ने लड़के तथा लड़कियों की अनिवार्य शिक्षा का विधान लगभग डेढ़ सौ साल पहले ही कर दिया था। उनके अनुसार इसमें राजनियम और जातिनियम होना चाहिए कि पाँचवे अथवा आठवें वर्ष से आगे अपने लड़के और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजे, वह दण्डनीय होवे। प्रथम लड़कों का यज्ञोपवीत घर में हो और दूसरा पाठशाला में आचार्यकुल में हो। नारी को पढ़ने का अधिकार नहीं है, ऐसा कहने वालों को स्वामी जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में लताड़ा है। वे स्पष्ट शब्दों में कहते हैं- "सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्यमात्र को पढ़ने का अधिकार है।... और जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हो, वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता तथा निर्बुद्धिता का प्रभाव है। देखो, वेद में कन्याओं के पढ़ने का प्रमाण है।"

वेदमंत्र का प्रमाण प्रस्तुत करते हुए स्वामी जी ने मन्त्र का भावार्थ करते हुए लिखा है- "जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त होके युवती, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के संग विवाह करते हैं, वैसे कन्या कुमारी ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त युवती होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश प्रिय विद्वान् और पूर्ण युवावस्थायुक्त पुरुष को प्राप्त होवे। इसलिए स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिए। स्वामी जी स्वेच्छा से विवाह करने के पक्षपाती थे। उन्होंने स्त्री और पुरुष दोनों को ही स्वेच्छा से विवाह करने का अधिकार प्रदान किया है। वे 'विवाह' पद की व्याख्या करते हुए लिखते हैं- "जो नियम पूर्वक प्रसिद्धि से अपनी इच्छा करके पाणिग्रहण करना वह 'विवाह' कहाता है।" स्वामी जी पतिव्रता स्त्री और स्त्रीव्रत पति को सत्कार के योग्य मानते थे। देवपूजा के प्रसंग में उन्होंने इसका विधान भी किया है। विवाह और गृहस्थ जीवन के लिए स्वामी जी शिक्षा को अनिवार्य मानते हैं। उन्होंने ऋग्वेदीय मन्त्र के भाष्य प्रसंग में लिखा है- "जैसे अच्छी शिक्षा और विद्या को प्राप्त हुई पतिव्रता स्त्रियाँ अपने पतियों का अथवा स्त्रीव्रत सदा अपनी स्त्रियों ही से प्रसन्न ऋतुगामी पति लोग अपनी स्त्रियों का सेवन करके सुखी और जैसे सुन्दर बलवान घोड़े मार्ग में शीघ्र पहुँचा के आनंदित करते हैं ....।" स्वामी जी ने पत्नी के सुपठित होने के लाभ तथा अपठित होने की हानि का वर्णन करते हुए लिखा है- "भला जो पुरुष विद्वान् स्त्री अविदुषी और स्त्री विदुषी और पुरुष

अविद्वान् हो तो नित्यप्रति देवासुर संग्राम घर में मचा रहे फिर सुख कहाँ? इसलिए जो स्त्री न पढ़े, तो कन्याओं की पाठशाला में अध्यापिका क्यों कर हो सके तथा राजकार्य न्यायाधीशादि, गृहाश्रम का कार्य जो पति को स्त्री और स्त्री को पति प्रसन्न रखना, घर के सब काम स्त्री के अधीन रहना बिना विद्या के इत्यादि काम अच्छे प्रकार कभी ठीक नहीं हो सकते।'' यहाँ स्वामी जी ने अत्यन्त स्वावलंबी तथा गृहस्थ के दायित्वों को समझने वाली स्त्री का वर्णन किया है। स्वामी जी स्त्रीत्व के कारण नारी को हीन अथवा कम सामर्थ्य का समझने के खिलाफ थे। स्वामी जी नारी के सामर्थ्य का अद्यतनीय विचारकों से भी आगे बढ़कर विचार करते हैं। बराक ओबामा के आगमन पर देश की पहली सैन्य अधिकारी की बहुत चर्चा हुई थी। स्वामी जी ने युद्धकला में भी स्त्री के पारंगत होने का उल्लेख अपने चर्चित ग्रन्थ में किया है। उनकी ये पंक्तियाँ आज भी पठनीय हैं- ''देखो! आर्यावर्त के राजपुरुषों की स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं क्योंकि जो न जानती होती तो कैकेयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्यों कर जा सकती? और युद्ध कर सकती। इसलिए ब्राह्मणी को सब विद्या, क्षत्रिया को सब विद्या और युद्ध तथा राजविद्या विशेष, वैश्या (वैश्य वर्ण वाली स्त्री) को व्यवहार विद्या और शूद्रा को पाकादि की सेवा की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए। वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्पविद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए। क्योंकि इनके सीखे बिना सत्यासत्य का निर्णय, पति आदि से अनुकूल वर्तमान यथायोग्य संतानोत्पत्ति, उनका पालन, वर्द्धन और सुशिक्षा करना घर के सब कार्यों को जैसा चाहिये, वैसा करना-कराना वैद्यक विद्या से औषधवत् अन्न पान बनाना और बनवाना नहीं कर सकती, जिससे घर में रोग कभी न आवे और सब लोग सदा आनन्दित रहें। शिल्पविद्या के जाने बिना घर का बनवाना, वस्त्र आभूषण आदि का बनवाना, गणित विद्या के बिना सबका हिसाब समझना-समझाना, वेदादि शास्त्र विद्या के बिना ईश्वर और धर्म को न जानके अधर्म से कभी नहीं बच सके। ''स्वामी जी ने कन्याओं के शीघ्र विवाह का विरोध किया है। उनके अनुसार सोलह से चौबीस वर्ष के बीच कन्याओं का विवाह किया जाना चाहिए। स्वामी जी ने बेमेल विवाह का यहाँ तक विरोध किया है कि वे कहते हैं कि मरण पर्यन्त कुमार रहो पर अयोग्य स्त्री अथवा पुरुष से विवाह न करो।

स्वामी जी से एक बार कुछ महिलायें लाहौर में उपदेश लेने आई थीं। स्वामी जी ने उन्हें निर्देश दिया था कि आपके पति ही आपके गुरु हैं। अपने पति को यहाँ भेजा करो तथा उनकी सेवा किया करो। स्वामी जी मानते थे कि पत्नी को पति का आज्ञा के बिना किसी गुरु के पास नहीं जाना चाहिए। स्वामी जी ने पति-पत्नी के प्रसंग में दोनों को ही यह निर्देश दिया है कि दोनों एक दूसरे की प्रसन्नता के बिना कोई भी व्यवहार न करे। ... घर के काम स्त्री और बाहर के काम पुरुष के अधीन रहना स्वामी जी को मान्य था। महर्षि दयानन्द ने अपने वेद भाष्य में अनेकत्र नारी को 'सुभगा' कहकर पुकारा है। आज के परिवेश में जब नारी को विज्ञापन में भोग्य वस्तु के रूप में चित्रित किया जा रहा है, तब यह आवश्यक हो गया है कि नारी के उदात्त स्वरूप की प्रतिष्ठा की जाए। इसके लिए स्वामी जी के विचार बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। नारी के अत्यन्त उज्ज्वल स्वरूप का वर्णन स्वामी जी ने किया है। स्वामी जी ने गृहिणी नारी का मूल्य भी बहुत ही गरिमापूर्ण ढंग से वर्णित किया है। घर के दायितवों को कम करके नहीं आँका जा सकता। एक ऐसे युग में जब नारी को जूती जैसे विशेषणों से संवोधित किया जाता था, स्वामी जी द्वारा

www.thearyasamaj.org

युद्धाभ्यास तथा वैद्यक शिक्षा के लिए नारी को उपयुक्त बताना एक क्रांतिकारी कदम था। मुझे स्मरण आता है कि अजमेर में आयोजित शताब्दी समारोह में इंदिरा गांधी ने कहा था कि मैं आज अगर देश की प्रधानमंत्री बनी हूँ, तो इसके पीछे महर्षि दयानन्द के विचारों की बड़ी भूमिका है। यह एक बड़ा सच है। स्वामी जी की करुणा का आलम यह था कि स्वामी जी गंगा के किनारे एक विधवा को देखकर रो पड़े थे। स्वामी जी के ज्यादातर समाज सुधार कार्यक्रम की पृष्ठभूमि में नारी ही थी। सती प्रथा, नारी-शिक्षा, विधवा विवाह आदि अनेक कार्यक्रमों के पीछे स्वामी जी ने नारी उद्धार को ही केंद्र बिंदु बनाया था। स्वामी जी के ग्रंथों में नारी का अत्यंत परिष्कृत, उदात्त तथा आधुनिक स्वरूप परिलक्षित होता है। वे यहाँ तक कहते हैं कि जो इसकी निंदा करता है, वही निंदनीय है। आज विवाह के नाम पर तमाम विडम्बनायें समाज में प्रचलित हैं। कहीं किसी को जिन्दा जलाया जा रहा है तो ऑनर किलिंग के मामले भी समाज में बढ़ रहे हैं। शताब्दी पूर्व कहे हुए स्वामी जी के ये विचार कि विवाह स्त्री-पुरुष की इच्छा से होने चाहिए। हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं। आंकड़ों के अनुसार पंजाब का पड़ोसी देश हरियाणा ऑनर किलिंग के मामले में सबसे आगे है। स्वामी जी ने लिखा है कि विवाह में स्त्री-पुरुष का ही संबंध विशेष है, माता-पिता का नहीं इसलिए वर-वधु की परस्पर प्रसन्नता और इच्छा विवाह में अत्यन्त आवश्यक है। ये विचार आज के युग में भी उपयोगी तथा मार्गदर्शक सिद्ध होंगे। आजकल जब भी शील परीक्षा की बात आती है, सीता रूपी स्त्री को ही परीक्षा देनी होती है। स्वामी जी ने संस्कार- विधि में वर्णित विवाह की विधि में वर तथा वधु दोनों की ही परीक्षा का विधान किया है। यही नारी को समान अधिकार देने वाले उनके विचारों में भी झलकता है। स्वामी जी ने लिखा है-

'दोनों का तुल्य शील, समान बुद्धि, समान आचार, समान रूपादि गुण, अहिंसक, सत्य, मधुरवादी, कृतज्ञ, दयालु, अहंकार-मत्सर-ईर्ष्या-काम-क्रोध-लोभरहित, देशसुधार, विद्याग्रहण, सत्योपदेश करने में निर्भय, उत्साही, कपट-द्यूत-चोरी-मद्य-मांसाहारादि दोषरहित अपने घर के कामों में अतिचतुर हो।''

यहाँ स्त्री पुरुष दोनों को गृहकार्यों में दक्ष होने की बात कहकर स्वामी जी ने दोनों को एक दूसरे का हाथ बंटाने का निर्देश दिया है। आज के पुरुषवादी समाज में स्वामी जी के इन विचारों का प्रचार-प्रसार करना बहुत ही आवश्यक है। स्वामी जी ने नारी के वन्दनीय, विवेकी तथा अधिकार संपन्न स्वरूप का अपने ग्रंथों में वर्णन किया है। वेद में इसीलिए **'सम्राज्ञी श्वसुरे भव'** ससुराल में रानी बन जैसी कामना विवाहिता नारी के लिए की गई है। मैं मानती हूँ कि स्वामी जी के विचार आज के आधुनिक कहे जाने वाले विचारकों से कहीं ज्यादा अधिक प्रगतिशील हैं। स्वामी जी के विचार नारी-अस्मिता का पोषण करने वाले हैं। आज के परिवेश में स्वामी जी के विचार और अधिक सामयिक और प्रासंगिक हो गए हैं। 'From the caves and jungles of hindustan' के पृष्ठ १६ में मैडम ब्लैवस्टकी ने स्वामी जी का हृदयग्राही वर्णन किया है। स्वामी जी के विचार महिलाओं की सुरक्षा का भी मार्ग प्रशस्त करते हैं। ☐☐

भूल सुधार

दयानन्द सन्देश के अंक 'नवम्बर 2016 में लेख ''वेद का कुरान पर प्रभाव'' पृष्ठ 7-12 पर मुद्रित लेख के लेखक का नाम भूलवश पं. रामचन्द्र देहलवी के स्थान पर अमर सिंह शास्त्रार्थ महारथी छप गया है। कृपया पाठक इसे पं. रामचन्द्र देहलवी के नाम से ही पढ़ें। दयानन्द सन्देश के विद्वान पाठक आचार्य श्याम नन्दन ज़ी ने इस भूल की तरफ ध्यान आकर्षित किया है। इसके लिए उनका धन्यवाद। पाठकों को हुई असुविधा के लिए हम खेद व्यक्त करते हैं।

www.thearyasamaj.org

भारत की वैदिक-काल की परम्पराएँ

(रामनिवास गुणग्राहक)

सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर महाभारत पूर्व तक के काल-खण्ड को वैदिक-काल के नाम से जाना जाता है। ऋषि-पद्धति से आर्य काल-गणना के अनुसार सृष्टि की आयु १,९६,०८,५३,०९७ वर्ष है। इसमें से महाभारत तक के लगभग ५००० वर्षों को निकाल कर जो अवधि है, वह वैदिक-युग या वैदिक-काल के नाम से सुविख्यात है। आज के वैज्ञानिक अनुसन्धान भी सृष्टि की आयु को लगभग दो अरब वर्ष मानते हैं। कुछ नवीन मतों के मानने वालों की दृष्टि सृष्टि-गणना में अब भी हजारों की संख्या से ऊपर नहीं जाती तथा हमारे कुछ बन्धु जो स्वयं को सनातनी कहते हैं, वे पुराण के तथ्यों को प्राचीन कह कर प्रचारित करते हैं। जबकि प्रामाणिक तौर पर ये अत्यन्त नवीन यहाँ तक कि इनमें ऐसे स्पष्ट संकेत भी मिलते हैं कि अंग्रेजों के आने के बाद भी ये पुराण लिखे जाते रहे हैं। भविष्य पुराण में एक श्लोक आता है-

रविवारे सण्डे च फाल्गुने चैव फर्वरी।
षष्टि सिक्सटी ज्ञेया एतदुदाहरणमीदृशम्।।

इन आँग्ल शब्दों से स्पष्ट है कि ये महर्षि व्यास की रचना तो हो नहीं सकती। भागवत पुराण के लेखक 'गीत गोविन्द' के लेखक श्री जयदेव के भाई पं0 बोपदेव बताए ही जाते हैं। अतः पुराण-वर्णित कोई भी तथ्य प्राचीन भारत का परिचायक नहीं होगा। उसकी जानकारी के स्रोत तो वेद शास्त्र, ब्राह्मणग्रन्थ, गृह्यसूत्र, स्मृति, वाल्मीकि-रामायण, गीता, महाभारत आदि धर्म व ऐतिहासिक ग्रन्थ हैं। पिछले तीन ग्रन्थों में मिलावट पाई जाती है, अतः इनकी वेदानुकूल बातें ही ग्राह्य हैं। महर्षि मनु महाराज ने स्पष्ट लिखा है **'वेद प्रतिपादितो धर्मः अधर्मस्तद् विपर्य्ययः'**। वेद स्वतः प्रमाण हैं, अन्य ग्रन्थ वेदों के अनुकूल होने पर ही प्रमाण माने जाते हैं। तो आओ, प्राचीन भारत के वेद आधारित समग्र व्यवस्था के कुछ अति आवश्यक तत्वों पर विचार करें।

१. **राजनैतिक व्यवस्था** :- मानव जाति को व्यवस्थित एवं अनुशासित करने वाले ग्रन्थों में वेद के बाद 'मनुस्मृति' का महत्वपूर्ण स्थान है। संसार का पहला व सम्पूर्ण संविधान मनुस्मृति को स्वीकारा गया है। उसमें राजतन्त्र व लोकतन्त्र दोनों व्यवस्थाएँ हैं। मगर राज का मूल उन्होंने दण्ड को कहा है। उन्होंने लिखा है :-

यत्र श्यामो लोहिताक्षो दण्डश्चरति पापहा।
प्रजाः तत्र न मुह्यन्ति नेता चेत्साधु पश्यति।।

अर्थात् जहाँ कृष्ण वर्ण व लाल नेत्रों वाले भयंकर पुरुष के जैसा सर्व पापों का नाश करने वाला दण्ड विचरण करता है, वहाँ प्रजा मोह (जड़ता) को प्राप्त न होकर आनन्द से रहती है। साथ ही यह भी कहा है कि दण्ड बड़ा तेजोमय है, उसे अविद्वान् व अधर्मात्मा धारण नहीं कर सकता। धर्म न्याय से रहित दण्ड राजा का नाश कर देता है। क्या राजा को भी दण्ड है? है तो कितना, इस पर मनु महाराज कहते हैं -

कार्षापणं भवेद्दण्ड्यो यत्र अन्यः प्राकृतो जनः।
तत्र राजा भवेद्दण्ड्यः सहस्रमिति धारणा।।

अर्थात् जिस अपराध के लिए सामान्य प्रजा जन को एक पैसा दण्ड हो, उसी अपराध के लिए राजा के लिए एक सहस्र पैसा अर्थात् सहस्र गुना दण्ड होना चाहिए। महाभारत शान्ति पर्व में राजा को प्रजा के सुख शान्ति व योगक्षेम का मूल कहा है। अति वृष्टि, महामारी राजा के अन्याय व पापाचरण से ही होती है। प्रजा से कर वसूलने के लिए मधुमक्खियों का उदाहरण दिया है कि जैसे मधु-मक्खी फूल को हानि पहुँचाये बिना रस ले लेती है, वैसे ही राजा को चाहिए कि प्रजा से सहज देय कर ही बिना कष्ट दिये लेना चाहिए। झूठी गवाही देने वाले को भी महर्षि मनु ने दण्ड विधान किया है। इससे न्याय करने में पर्याप्त सुविधा हो जाती है। युद्धनीति का भी बड़ा विशद् वर्णन मनुस्मृति में है। मनुस्मृति, विदुरनीति, शुक्रनीति एवं आद्याचार्य राजर्षि चाणक्य के नीति ग्रन्थों में संसार की सर्वश्रेष्ठ एवं सम्पूर्ण राजनीति के होते हुए भी हमारे संविधान निर्माताओं ने बड़ी निष्ठुरता से दुराग्रहग्रस्त होकर

उन्हें त्याग कर भानुमति का पिटारा लाकर रख दिया है, जिसका प्रतिफल घोटाला युग, धर्मनिरपेक्षता का कलंक, आरक्षण का विष, समग्र भारत को सहना पड़ रहा है।

२. **सामाजिक ढाँचा** :- परमपिता प्रभु ने वेद के माध्यम से हमें सारा ज्ञान-विज्ञान दे रखा है। वेद में समस्त सत्य विद्या बीज रूप में विद्यमान हैं। यजुर्वेद के मन्त्र **'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत.....'** के आधार पर तत्ववेत्ता मनु महाराज ने समाज की सुचारू व्यवस्था के लिए इसे चार वर्णों में विभक्त किया। ज्ञान-विज्ञान में लगने वाले ब्राह्मण, राजव्यवस्था एवं अन्याय से लड़ने वाले क्षत्रिय, कृषि व्यापार आदि में निपुण वैश्य तथा जो विद्या न पढ़ सके, बल पराक्रम से रहित व वैश्यवृत्ति से रहित हो, वह शूद्र अर्थात् इन तीनों की सेवा करे।

मनु महाराज की इस कर्म गुण व स्वभाव पर आधारित वर्णव्यवस्था को कुछ प्रमादी व पाखण्डी पंडितों ने जन्म से जोड़कर जो भयानक अपराध किया है, वह पाण्डित्य के नाम पर कलंक है। ऐसा इस कारण किया थां क्योंकि महर्षि मनु ने ब्राह्मण के शूद्र व शूद्र के ब्राह्मण बनने का रास्ता खुला रखा था। ऐसे में ब्राह्मणत्व एक साधना थी। इस साधना से हीन पोंगाओं ने इसे जन्म से ही जोड़ दिया। मनु जी ने लिखा है

'शूद्रो ब्राह्मण लाभेति ब्राह्मणश्चेति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्या तथैव च।।"

अर्थात् विद्यादि सद्गुण व सत्कर्मों से शूद्र ब्राह्मण व इनसे हीन ब्राह्मण भी शूद्र हो सकता है। इसी प्रकार क्षत्रिय या वैश्य आदि भी होते हैं। महर्षि मनु ने तीन कर्म वेद पढ़ना, यज्ञ करना व दान देने का तीनों वर्णों को समान आदेश दिया है। ब्राह्मणों का वेद पढ़ाना यज्ञ कराना व दान लेना, क्षत्रियों का प्रजारक्षण व न्याय, वैश्यों का व्यापार कृषि व ब्याज लेना विशेष कर्म कहे हैं। शूद्रों का केवल सेवा कर्म ही है। ये चारों वर्ण परस्पर सहयोग व सहृदयता से प्रीतिपूर्वक रहते थे। आज जो इनके मध्य घृणा व द्वेष की विष-वेल दिख रही है, उसे पाखण्डी पण्डितों ने बोया व देशद्रोही कथित राजनेताओं ने पनपाया है।

३. **शिक्षा**- 'मातृमान् पितृमानाचार्मवान् पुरुषो वेदः' इस शतपथ के बचनानुसार ५ वर्ष तक बच्चा माँ के सान्निध्य में, ५ से ८ तक पिता की देखरेख में व आठ से शिक्षा की पूर्णता तक आचार्य कुल में रहकर वेद-वेदांग पढ़ता था। शिशु के कोमल मस्तिष्क के सहज विकास के लिए यह व्यवस्था अत्यनिवार्य है। ८ वर्ष के बाद लड़के-लड़कियों को गुरुकुल भेजना राजनियम था। विद्यार्थीकाल में युवक तपस्यापूर्वक रहते थे। पैरों में जूते, सिर पर वस्त्रादि धारण नहीं करते थे। स्वादिष्ट भोजन, सुगन्धित तेल, माला आदि का सेवन विद्यार्थी नहीं कर सकता था। तभी तो कहा है-

'सुखार्थिनो कुतो विद्या विद्यार्थिनो कुतो सुखम्।
सुखार्थी वात्यजेद्विद्या, विद्यार्थी वात्यजेत्सुखम्।।

वैदिक काल में विद्या का महत्व इसी से विदित होता है कि जिसने एक भी वेद नहीं पढ़ा हो, ऐसा व्यक्ति ग्रहस्थ के योग्य नहीं समझा जाता था। विद्यार्थीकाल में अखण्ड ब्रह्मचर्य, संयम एवं योगाभ्यास भी कराया जाता था। कुल मिला कर वह शिक्षा मानव के अन्दर मानवीय गुणों को विकसित करती थी। इसलिए **'विद्या ददाति विनयं' सा विद्या या विमुक्तये'** को लक्ष्य रखकर ही शिक्षा दी जाती थी। विद्या का स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखा है **'वेत्ति यथावत्तत्वं पदार्थस्वरूपं यया सा विद्या'**। समस्त पदार्थों के यथार्थ तत्वस्वरूप का पूर्ण बोध जिससे हो सके, वो विद्या कहाती है। आज मैकाले की शिक्षापद्धति हमारे चरित्र नाश के बीज बो चुकी है, जो अत्यन्त निकट भविष्य में भारत को भोगना पड़ेगा। विडम्बना ये है कि सामने खड़े कटुसत्य को हम देख कर भी अनदेखा करते चले जा रहे हैं। **'विपरीत बुद्धि विनाशकाले'**

४. **नारी शिक्षा**- कुछ साल पूर्व 'स्त्री शूद्रो नाऽधीयताम' कह कर इन्हें शिक्षा से वंचित रखा जाता था। महर्षि देव दयानन्द जी महाराज की कृपा हुई। मानव जाति के आधे अंश नारी को पढ़ने का पूर्ण अधिकार पुनः मिला। वैदिक युग में पुत्रों की भांति पुत्रियों के भी कन्या गुरुकुल हुआ करते थे। नारीकुलभूषण गार्गी, मैत्रेयी, अपाला घोषा आदि ऋषिकाएँ हुई हैं। बाल्मीकि रामायण में कौशल्या का यज्ञ करती हुई का वर्णन है। हनुमान जी ने सीता की खोज एक नदी पर बैठकर ही की, कि यदि सीता जीवित

www.thearyasamaj.org

होगी, तो वैदिक मर्यादा के अनुसार नदी तट पर संध्या करने अवश्य आएगी। श्रौत्रसूत्र में **'इयां मन्त्र पत्नी पठेत्'** स्पष्ट लिखा है- यह मन्त्र पत्नी पढ़े। यदि घर में विद्वान् पुरुष को अनपढ़ पत्नी मिले तो गृहस्थ सुचारू रूप से नहीं चल सकता। **'माता निर्मात्री भवति'** अनपढ़ पर कैसे सार्थक होगा? वह पुत्र का निर्माण कैसे करेगी? यही नहीं, गृहस्थ में ऋतु के अनुकूल भोजन वस्त्रादि की व्यवस्था के लिए तब कन्याओं को वैद्यकशास्त्र तो अवश्य ही पढ़ाया जाता था।

५. समाज में नारी का स्थान- वैदिकशास्त्रों में नारी को पूज्या कहा है। **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'** मनुवचन है दूसरे **'शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्'** अर्थात् जिस कुल में नारी शोकाकुल (दुःखी) होती है, वह कुल शीघ्र नष्ट हो जाता है। इसलिए मनु महाराज ने समाधान दिया है-

सन्तुष्टो भार्या भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवं।।

अर्थात् जिस कुल में पति-पत्नी एक दूसरे से सन्तुष्ट प्रसन्न रहते हैं, वहाँ नित्य कल्याण रहता है। पति किसी भी शुभकार्य को पत्नी की अनुपस्थिति में नहीं कर सकता। यज्ञ में दायें भी पत्नी को श्रेष्ठता के कारण ही बिठाया जाता है। नारी ग्रहस्थ की धुरी होती है। अतिरिक्त इसके नारी की मार्यादाएँ भी होती हैं। नारी इतने पर भी अकेली स्वच्छन्दतापूर्वक कहीं जहाँ-तहाँ नहीं घूम सकती थी। समानाधिकार के नाम पर निर्लज्जता पूर्वक 'शो-पीस' या श्रृंगार के नाम पर विलासिता व वासना का खुला निमन्त्रण देने की छूट तब कदापि नहीं होती थी। वेद का आदेश है कि नारी को घर से बाहर नीचे देखकर संयम से पाँव बढ़ाते हुए सम्पूर्ण धड़ को भलीभाँति ढककर मन्थर गाति से चलना चाहिए।

६. आश्रम व्यवस्था- चार वर्णों की तरह वैदिक-काल में चार आश्रमों की व्यवस्था प्रचलित थी। ब्रह्मचर्य-आश्रम (विद्यार्थी जीवन) समस्त आश्रमों की नींव व ग्रहस्थाश्रम सभी आश्रमों में बड़ा आश्रम माना गया है। कारण ब्रह्मचर्य आश्रम में हमारा निर्माण होता है **'पूर्ववयसि तत्कुर्यात येन वृद्धः सुखं वसेत्'**। यानि इस अवस्था में ही हमें इन उत्तम गुण कर्म स्वभाव व व्यवहार प्रणाली को प्राप्त कर लेना चाहिए, जिससे वृद्धावस्थापर्यन्त सुखपूर्वक जीते रहें। गृहस्थ की ज्येष्ठता इसलिए है क्योंकि जैसे सारी नदियाँ सागर में आश्रय पाती हैं, वैसे सभी आश्रम गृहस्थ में ही आश्रय पाते हैं। तीसरा आश्रम वानप्रस्थाश्रम है। २५ वर्ष तक सामान्य ब्रह्मचर्य, २५ से ५० तक गृहस्थ, ५० से ७५ तक वानप्रस्थ तथा ७५ से १०० वर्ष तक संन्यास आश्रम का विधान है। ५० वर्ष बाद गृहस्थ छोड़कर वानप्रस्थ में जाकर प्रभु चिन्तन, आत्मिक उन्नति वेदाध्ययन करना एवं गृहस्थ के लोभ, मोह, ईर्ष्या द्वेषादि को दूर करना ही वानप्रस्थ है। ७५ वर्ष की आयु तक ये अभ्यास लगातार चले। जब इनमें निपुण हो जाये। गृहस्थ की वासनाओं से छूट जाए तो विश्व कल्याण, प्राणी मात्र के कल्याण की कामना से सत्य विद्या के प्रचार-प्रसार में लग जाए। इस कल्याणकारी व्यवस्था का पालन राजा-महाराजा भी बड़ी निष्ठा से करते थे। ऐसे अनेक उदाहरण विद्यमान हैं।

राष्ट्र और विश्व के प्रति दृष्टिकौण- 'जननी जन्म-भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयशी' का पावन उद्‌घोष- **'वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहित'** का वेदादेश हमारे वैदिक युगीन् राष्ट्रप्रेम का परिचायक है। देश भक्ति का स्वाभिमान व राष्ट्ररक्षा का कर्त्तव्य उस समय मानव का मुख्य गुण होता था। वैदिक काल में विद्वान् का मान क्षत्रिय से अधिक होता था इसीलिए हम राष्ट्रीय प्रार्थना करते समय ईश्वर से ब्रह्म-तेज वाले ब्राह्मण, महारथी क्षत्रियों से पहले माँगते थे **'आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्**। आराष्ट्रे राजन्य : शूर इषव्योऽति व्याधी महारथो जायताम्। (अथर्ववेद) **हमारे मनोभाव एवं कर्त्तव्य राष्ट्र तक ही सीमित नहीं रहे, हमारी योजनाएँ 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' तक थीं व हैं कि हमें विश्व को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ बनाना है।** ध्यान रहे आर्य कोई जातिवाचक शब्द नहीं गुणवाचक है। **'ऋ गतौ'** धातु से निष्पन्न आर्य शब्द का अर्थ होता है' मानव जींवन के लक्ष्य को जानकर उस ज्ञान को व्यवहार में लाकर प्राप्त करने वाला'। (ज्ञान गमनं प्राप्तश्चेति) इस प्रकार स्वयं को विश्वसमुदाय से जोड़ने के लिए ही अथर्ववेद का एक स्तोता कहता है **'भूमि माता पुत्रोऽहं पृथिव्याः. ...।'** भूमि मेरी माता है और मै इस पृथ्वी का पुत्र हूँ।

अथर्ववेद में पृथ्वी सूक्त के नाम से एक पूरा सूक्त ही ऐसा है।

८. **धर्म प्राणिता-** ईश्वरीय ज्ञान वेदों के आदि देश भारत को विश्वगुरु का गौरव प्राप्त है। उस काल में इसका हर कार्य आत्मकल्याण के लिए होता था। 'आत्म कल्याण की नींव जनकल्याण है' इस रहस्य को तव यहां का मानवमात्र भलीभाँति जानता था। सेवा, सहयोग, सादगी, श्रृद्धा, साधना, शालीनता, सहृदयता, समर्पण एवं सौम्यता हमारे व्यवहार के आधारविन्दु थे। इनसे पूरित जीवन ही धार्मिक जीवन होता है। हमारे जीवन की हर गतिविधि के मूल में धर्म ही होता था। यहाँ तक कि हमारे व्रत/उत्सव आदि जीवन के अन्य प्रसन्नता के अवसर भी यज्ञ के बिना नहीं होते थे। यज्ञ-हवन एक ऐसा संयुक्त (सामाजिक) धर्म है, जो हमारे नित्य कर्मों में भोजनादि आवश्यक कार्यो की भांति सम्मिलित था। यज्ञ के द्वारा हम अपने शरीर से होने वाले प्रदूषण को दूर करते हैं। आज भी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का सर्वोत्तम समाधान यज्ञ ही है। आज उस यज्ञ के महत्व को सारा विश्व मान चुका है, दुर्भाग्य है कि भारत आज सभी उत्तम कर्मों से, अपने ऋपि-मुनियों के आदर्शों से रहित होता जा रहा है। यह हमारे अधः-पतन व कप्ट-क्लेशों का मूल कारण है।

६. **मानव निर्माण की प्रक्रिया-** हमारे ऋपियों के सूक्ष्म ज्ञान-विज्ञान को देखकर हमें बड़ा गौरव अभिमान एवं आनन्द का अनुभव होता है कि जिन तथ्यों को खोजने में आज संसार लगा हुआ है, वे सभी बातें लाखों-करोड़ों वर्ष पूर्व हमारे पूर्वज हमें दे गए थे। मनुष्य के अन्दर अनेक जन्मों के संस्कार उसके चित्त में संग्रहीत हुए चले आते हैं। उनमें से कुसंस्कारों को दबाकर सुसंस्कारों को जागृत करने के लिए हमारे ऋपियों ने सोलह संस्कारों की एक माला हमें दी। वैज्ञानिक प्रक्रिया के द्वारा वेद-मन्त्रों के माध्यम से माँ के गर्भ में आए शिशु के दूषित संस्कारों को दबाया जाता है। गर्भ में जैसे-जैसे वच्चे का निर्माण या विकास होता है, उसी स्तर पर उसके शारीरिक व मानसिक दोपों को यज्ञ एवं कुछ विशेप प्रक्रियाओं से दूर कर सद्वृत्तियों को उभारा जाता है। तीन संस्कार गर्भ में ही सम्पन्न होते हैं, ८ वर्प का होते होते लगभग ७/८ संस्कार हो जाते हैं। जिनमें गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण अन्नप्राशन चूड़ा कर्म एवं यज्ञोपवीत संस्कार आदि मुख्य हैं। यह विज्ञानसिद्ध कला हमारे ऋपियों की अनुपम देन है, जिसे हमें आज भी श्रद्धा व निप्ठा से अपनाना चाहिए।

१०. **पुरुषार्थ चतुष्टयः-** मानव की सब क्रियाओं के मूल में सुख शान्ति की कामना होती है। चाहे कर्म वो कितने भी बुरे करता हो मगर ईश्वर जाने कैसा आकलन है उसका कि उसके बुरे फल की इच्छा कभी नहीं करता। इससे मानव मात्र ही नहीं जीव मात्र के जीवन-उद्देश्य का पता चलता है कि वह किसी परम आनन्द की खोज में है, जहाँ दुःख-क्लेश कप्ट आदि न हो। इसी का वैदिक वाड्मय में पुरुपार्थ चतुष्टय नाम दिया है। वे हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। धर्मपूर्वक अर्थ (धन) कमाना धर्म (मर्यादा) पूर्वक उसे भोगना ही मुक्ति अर्थात् उस परम् आनन्द को पाने की प्रक्रिया है। आज अधर्म (अन्याय) से धन कमा कर असंयमित अमर्यादित होकर पशुओं की तरह भोगते हैं, तो इस प्रकार सुख शान्ति व आनन्द का स्वप्न कदापि पूर्ण नहीं हो सकता।

यह हमने अति संक्षेप में प्राचीन भारत का रेखाचित्र खींचा है, जिसमें रंग भरे जाएँ, तो कई ग्रन्थ तैयार किये जा सकते हैं। कई महत्वपूर्ण तत्व शेष भी हो सकते हैं। हमारा प्राचीन सामाजिक जीवन यथार्थ में एक मानव जीवन की चरमोन्नति का अकेला उदाहरण है। आवश्यकता है उन उन्नतिशील सुख-शान्ति व आनन्द प्रद जीवन मूल्यों के पुनः प्रचार-प्रसार की। राजनैतिक पथ-भ्रप्टता के कारण यह अत्यन्त दुप्कर एवं समाज की दुर्गति दुःख क्लेश, कष्ट व अशान्ति को देखकर यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है। आओ, हम सब मिलकर मानवता के उद्धार का सत्संकल्प लें और उसकी पूर्ति में प्राण-प्रण से जुट जाएँ। इससे कम से कम हम तो उस परम आनन्द के पथ पर चल ही पड़ेंगे और हमें इसका अनुभव भी तत्काल हो जाएगा। प्रभु से प्रार्थना है कि हमें इस शिव-संकल्प को पूरा करने की शक्ति एवं सामर्थ्य प्रदान करें।

❑❑

www.thearyasamaj.org

"हमारा प्राचीन नाम हिन्दू नहीं"

(स्व० पं० ताराचन्द वैदिक तोप, नारनौल, जिला महेन्द्रगढ़, हरि.)

कहीं भी हिन्दू नाम लिखा नहीं पाया।। टेक
यवन काल से पहले का किसी पुस्तक में प्रमाण नहीं
वेद शास्त्र उपनिषद ब्राह्मण ग्रन्थों दरम्यान नहीं
रामायण और महाभारत बतलाता कोई पुराण नहीं
जैन बौद्ध ग्रन्थों के अन्दर मिलता कहीं निशान नहीं
मनुस्मृति आदि स्मृति ग्रन्थों में भी बयान नहीं
नाटक और किसी काव्य बीच में किया किसी ने गान नहीं
अमरकोष आदि कोषों में जिकर कहीं नहीं आया- ।।१।।

नाम आर्य पढ़ो वेद में जगह-जगह पर आया कि ना
आर्य वाचः इस प्रकार कई ग्रन्थों में दर्शाया कि ना
शुरु सृष्टि में आर्यो ने यह आर्यावर्त्त बसाया कि ना
संकल्प में भी नाम देश का आर्यावर्त्त सुनाया कि ना
पाणिनि ने अपने शब्दानुशासन में बतलाया कि ना
आर्य ब्राह्मण कुमारयोः लेख लिखा यह पाया कि ना
मनुस्मृति पढ़ो मनु ने साफ-साफ दर्शाया- ।।२।।

वाल्मीकी रामायण अयोध्या काण्ड साफ बतलाय रहा
गीता में श्री कृष्ण अर्जुन को आर्य कह कर समझाय रहा
युधिष्ठिर विजय काव्य पढ़ देखो नाम आर्य आय रहा
आर्यः ईश्वरपुत्रः यह निरुक्तकार सुनाय रहा
काशी विश्वनाथ मन्दिर पर लिखा आर्य पाय रहा
राष्ट्रम् आर्यस्य च उत्तमम भविष्य पुराण जताय रहा
जैनियों का तत्वार्थ सूत्र नाम आर्यः गाय रहा
आर्यो से जो भिन्न मनुष्य वह दस्यु नीच कहाया- ।।३।।

संवत् १८३७ काशी का सुनो हवाला जी
श्रावण बदी एकम् को एक व्यवस्था पत्र निकाला जी
जिसमें ४६ पंडित शामिल चुने हुए थे आला जी
हमारा हिन्दू नाम नहीं यह साफ-साफ कह डाला जी
स्वामी विशुद्धानन्द बाल शास्त्री ने भी नहीं टाला जी
जिन्होंने स्वामी दयानन्द के संग किया था गड़बड़ झाला जी
उन्हीं लोगों ने नाम आर्य हर्षित हो अपनाया- ।।४।।

अमरकोष में आर्य शब्द का अर्थ श्रेष्ठ बतलाया है
पर्यायवाची सभ्य सज्जन साधु कुलीन कहाया है
विरोधियों ने घृणा से हमें हिन्दू कह सुनाया है
काला, काफिर, गुलाम हमें नीचों से नीच ठहराया है
दयानन्द ने करी दया सोतों को आन जगाया है
सत्य सनातन वेदप्रथा का फिर से मान कराया है
ताराचन्द दिये बना आर्य हिन्दू नाम छुड़ाया।।५।।

▢▢

www.thearyasamaj.org

आर./आर. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S
१४-१५/१२/२०१६
भार- ४० ग्राम

दिसम्बर 2016

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2015-17
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१५-१७
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2015-17

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

— दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph.:011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में.........................
ग्राम.........................
डा0.........................
जिला.........................

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।